CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ॐ शताब्दी पुस्तकमाला—पुष्प-२

कठोपनिषद्-प्रकाश

कठोपनिषद् का श्रद्धापूर्वक सप्रमाण विवेचन ।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

लेखक
श्री गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Acc. 6488

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

६०

ज्ञानोदय-पुस्तकमाला—पुष्प-२

कठोपनिषद्-प्रकाश

[कटोपनिषद् का श्रद्धापूर्वक मनन व विवेचन]

शरणागत पाल कृपाल प्रभो, हमको इक आस तुम्हारी है।
तुम्हरे सम दूसर और कोऊ नहिं दीनन को हितकारी है।
सुधि लेत सदा सब जीवन की अति हो करुना विस्तारी है।
प्रतिपाल करै बिनही बदलै अस कौन पिता महतारी है।
जब नाथ दया करि देखत हौ छुटि जात विथा संसारी है।
बिसराय तुम्हें सुख चाहत जो अस कौन नदान अनारी है।
परवाहि तिन्हें नहिं स्वर्गहु की जिनको तव कीरति प्यारी है।
धनिहै धनिहै सुखदायक जो तव प्रेम सुधा अधिकारी है।
सब भाँति समर्थ सहायक हौ तव आश्रित बुद्धि हमारी हैं।
"परताप नरायण" तौ तुम्हरे पदपंकज पै बलिहारी है ॥१॥

पितु मातु सहायक स्वामि सखा तुमही इक नाथ हमारे हौ।
जिनके कछु और अधार नहीं तिनके तुम्हही रखवारे हौ।
सब भाँति सदा सुखदायक हौ दुख दुर्गुन नासन हारे हौ।
प्रतिपाल करौ सगरे जग को अतिसै करुना उरधारे हौ।
भूलिहैं हमही तुमको तुमतौ हमरी सुधि नाहि बिसारे हौ।
उपकारन को कछु अंत नहीं छिन ही छिन जो बिस्तारे हौ।
महराज महामहिमा तुम्हरी समुझैं बिरले बुधिवारे हौ।
शुभशान्ति निकेतन प्रेमनिधे ! मन मंदिर के उजियारे हौ।
यहि जीवन के तुम जीवन हौ इन प्रानन के तुम प्यारे हौ।
तुमसों प्रभु पाय "प्रतापहरि" केहि के अब और सहारे हौ ॥२॥

पं० प्रताप नारायण मिश्र

लेखक
श्री गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्वाधिकार सुरक्षित-लेखक

पुस्तक मिलने का पता :—
(१) राजेन्द्र स्टोर्स, साकची, जमशेदपुर।
(२) श्री वृन्दावन साहु, पुस्तक भण्डार, साकची, जमशेदपुर।

प्रकाशक
श्री रमेश चौबे
साकची, जमशेदपुर

प्रथम संस्करण, १९६६
मूल्य ३·२५ पैसे

मुद्रक
श्री कामेश्वर नाथ भार्गव,
सुपरफ़ाइन प्रिंटर्स,
१-सी० बाई का बाग,
इलाहाबाद

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आत्मपरिचय

मेरा जन्म भाद्र शुक्ल त्रयोदशी बुधवार विक्रम सम्वत् १९७१ को अपने पैतृक गाँव कोठरा थाना सासाराम, जिला शाहाबाद, प्रान्त बिहार में हुआ। प्रायः ९ उमरिया चार भाई—मुझसे एक बड़े श्री जनक चौबे और दो छोटे—चि० देवराज व चि० रामराज।

मेरे पिताजी (स्वर्गीय पं० शिवनन्दन चौबे) बचपन में ही चल बसे। मेरी माँ (श्रीमती राधिका देवी जी) को ही खेती, गृहस्थी व हम चारों भाइयों के पालन-पोषण का भार उठाना पड़ा। पिताजी की मृत्यु के समय मेरे भैया 'अपर' में पढ़ते थे। मेरी पढ़ाई अभी शुरू नहीं हुई थी। उन्हें पढ़ाई छोड़नी पड़ी।

मेरे पितृकुल में शिक्षा एकदम न थी। सभी निरक्षर थे, लेकिन मेरे ननिहाल का घराना—ग्राम एघारा थाना गढ़ नोखा, जिला शाहाबाद—खानदानी पंडित। मेरी माँ पढ़ी न होने पर भी बहुत तीव्र बुद्धि की तथा व्यवहार एवं कार्य में कुशल। बहुत प्रतिष्ठित, बहुत अध्यवसायी—मोटे शब्दों में सभी अच्छे गुणों से परिपूर्ण।

मेरी माँ की प्रबल इच्छा मुझे पढ़ाने की थी। शायद उसने मुझमें कुछ विशेष गुण पाया हो। पिताजी मामूली जायदाद छोड़ कर मरे थे। माँ के पास कुछ रुपये थे। वह अपने प्रयास से धन में वृद्धि ही करती गई।

सब गुणों के होते हुए भी माँ ने हम लोगों की शादी में बहुत जल्दी की। मेरी शादी ८ वर्ष की उम्र में हुई। गौना तीन साल के बाद। उसके बाद मेरी पढ़ाई शुरू हुई। एक डेढ़ साल में लोअर तक की पढाई जैसे-तैसे समाप्त की। अपर में अपने गाँव से ५ मील दूर सासाराम में नाम लिखाना पड़ा व मिडिल में बाँक मिडिल स्कूल में। उस जमाने में मेरी बस्ती में कौन कहे आस-पास के गाँवों में कहीं स्कूल न थे। बस्ती में कोई बताने वाला नहीं मिलता था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विचित्र ढङ्ग से मेरी माँ मुझे पढ़ाया करती। ककहरा, गिनती और कुछ पहाड़े उसे जबानी खयाल थे। रात के सोने के समय पढ़ाया करती थी। जब मैं ककहरा वगैरह पढ़ गया तो वह चिट्ठी का मजमून बोलती और मुझसे लिखवाती। फिर मुझे पढ़ने को कहती। अगर मैं सही-सही पढ़ देता तो वह कहती ठीक—बहुत खुश होती। अगर न पढ़ सकता तो गलत क्योंकि खुद तो पढ़ी नहीं है।

मिडिल पास करने के बाद सासाराम हाई स्कूल में दाखिल हुआ। वहीं से सन् १९३७ में मैट्रिक पास किया। पढ़ते समय घर की खेती में भी हाथ बटाना पड़ता था। भैया उस समय साल में प्रायः चार-पाँच महीने बीमार रहते और मुझे स्कूल छोड़ना पड़ता था। शायद ही कभी पूरे साल पढ़ाई की हो।

मेरे ममेरे भाई पं० बैजनाथ तिवारी संस्कृत के अच्छे विद्वान हैं। मैं स्कूल की छुट्टियों में उन्हीं के साथ ननिहाल में रहता था। उस समय वे संस्कृत पढ़ रहे थे। संस्कृत की ओर मेरी प्रवृत्ति उन्होंने जगाई। मैं उनसे संस्कृत के श्लोक सुना करता था। संस्कृत के श्लोक सुनने में बहुत मधुर लगते हैं।

बचपन में ही सामाजिक बुराइयों व देश की गुलामी के विरुद्ध विद्रोह की भावना भड़क पड़ी थी। १९३५ के लिखे मेरे अप्रकाशित लेख—कलियुग के रईस, धर्म के ठीकेदार पण्डे आदि से इनकी पुष्टि होती है। आज भी ये लेख मौजूद हैं। शायद कभी छप जायँ।

मेरी कामना लेखक व लीडर बन देश की आजादी की लड़ाई में सक्रिय भाग लेने की थी; लेकिन परिस्थिति के सामने झुकना पड़ा। कॉलेज की शिक्षा सुलभ न हो पाई। मैट्रिक पास कर गाँव में स्कूल खोला, बनवाया। अभी क्लास ६ तक चल रहा है।

सन् १९३८ के अन्त में जमशेदपुर आया। यहीं से पुलिस में सन् १९४० में गया और अभी हूँ। मेरी पढ़ाई में मेरी धर्मपत्नी का सराहनीय सहयोग रहा है।

—गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषय-प्रवेश

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

प्रणाम ! १-१-६६

आप की प्रेरणा से 'अनमोल ग्रंथ गीता' की चर्चा हम दोनों ने पत्र के माध्यम से की, जो गीतामृत के नाम से प्रकाशित हो रही है।

आज सन् १९६६ की पहली तारीख को, आइए, हम लोग कठोपनिषद् की चर्चा—इसके उपदेशों को अपने जीवन में उतारने तथा उनके अनुरूप अपने जीवन को ढालने के उद्देश्य में प्रारंभ करें।

मित्र ! प्रसिद्ध उपनिषद् १०८ हैं। कठोपनिषद् उन्हीं में एक है। इसमें दो अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय में तीन-तीन वल्लियाँ हैं।

यजुर्वेद की एक सौ एक शाखाएँ हैं, जो शुक्ल और कृष्ण दो विभागों में विभाजिता हैं। कृष्ण-विभाग में एक कठ-शाखा है। कठोपनिषद् इसी कठ-शाखा से संबंधित है।

कठोपनिषद् में नचिकेता और मृत्यु देवता यमराज की वार्त्ता के माध्यम से आत्म-तत्व—बोलता जीव क्या है ? मरने के बाद इसकी क्या गति होती है ? आत्मा परमात्मा में क्या भेद है ? इत्यादि का वर्णन सुन्दर ढंग से किया गया है। गूढ़ आध्यात्मिक (आत्मा-परमात्मा संबंधी) विषय रोचक कहानी के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं।

आत्मा और देह के भेद भी विस्तार में बताए गये हैं। हम लोग आत्मा हैं, देह नहीं। देह तो आत्मा का अस्थायी निवास स्थान है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देह नश्वर है और आत्मा अमर है। देह तो किसी की भी न रही है न हम लोगों की रहेगी। फिर, इसके लिए व्यर्थ की ममता क्यों! आदि बातों का बोध कठोपनिषद् में स्पष्ट रूप में कराया गया है।

दुर्भाग्यवश, पुराने जमाने में आज कल की तरह इतिहासादि लिखने की प्रणाली नहीं थी। अतएव, कौन-सी घटना कब घटी? कौन से ग्रंथ कब तथा किसके द्वारा लिखे गए? आदि बातों का सही-सही पता नहीं चलता। बहुत से ग्रंथ कालान्तर में नष्ट भी हो गए। उपलब्ध ग्रंथों के भी कुछ भाग काल के गाल में चले गये होंगे ही।

फिर भी, ग्रंथों के पठन-पाठन तथा अवशेषों के अवलोकनादिसे इतना पता अवश्य चलता है कि वैदिक काल में जब वेदादि गूढ़ ग्रंथों की रचना हुई थी, तब समाज के कुछ मेधावी लोग जो ब्राह्मण कहलाते थे पहाड़ की कंदराओं में रहा करते थे। कंद-मूल-फल खाकर जीवन निर्वाह करते थे। समस्त भोगों को तिलाञ्जलि देकर वे त्याग और तपस्या की जिंदगी बसर करते थे। सतत् अध्ययन, चिन्तन, मननादि से ज्ञान प्राप्त कर, सद्ग्रंथों की रचना करते थे।

आज-कल की तरह उस समय कागज और छापाखाने की भी सुविधा न थी। बहुत काल तक, तो रचनाएँ एवँ उनकी पढ़ाई जबानी ही होती आयीं। इसी से वे श्रुति यानी सुनी हुई कहलायीं। संभवत: कठोपनिषद् की रचना भी ऐसे ही किसी तपस्वी ने पहाड़ की कंदरा में ही अपनी पर्ण कुटी में बैठकर, तथा त्याग व तपस्या की अग्नि में अपने तन को तपा कर की होगी। कठोपनिषद् उस महान् व्यक्ति के निजी सुख व सुविधाओं के त्याग का ही फल है। यह मानव मात्र के लिए उसकी अमर देन है। इसे लोग एक जमाने से पढ़ते और लाभान्वित होते आ रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे।

उस महात्मा को बार-बार नमस्कार है!

अनंत बार नमस्कार है, उस जगन्नियन्ता को, जो, चोरों के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पीछे बराबर दौड़ते रहने वाले से अध्यात्म-विषयों की चर्चा करा रहा है, पुस्तकों की रचना करा रहा है ! वाह रे तेरी लीला !! न मालूम और भी क्या-क्या कराने बाकी हैं तुझे मुझ से ! बहुत हुआ ! भगवन् ! बस ! अब बुला लो अपने पास !

हार्दिक धन्यवाद व सप्रेम प्रणाम बार-बार अनेक बार मित्र ! आप को ! मेरी जीवन-धारा को अपराध क्षेत्र से मोड़ कर बहा दिया अध्यात्म क्षेत्र में आपने !

आलोचकों तथा समालोचकों को भी नमस्कार है, जो बाल की खाल निकालने से बाज नहीं आते !

बहुत-बहुत नमस्कार है उनको, जिन्हें औरों पर कीचड़ उड़ेलने ही में मजा आता है ! भगवान इन्हें सुबुद्धि दें ।

मेरा हार्दिक धन्यवाद है अपने अन्य मित्रों, शुभचिन्तकों और पाठकों को जिन्होंने मेरी प्रथम रचना-गीतामृत-को अपना कर मुझे प्रोत्साहित किया है ।

अगले पत्र मैं अध्याय १ की पहली वल्ली की चर्चा की जाएगी ।

मित्र ! आध्यात्मिक गूढ़ विषय को हम लोग चित्त को निर्मल किये बिना समझ नहीं पायेंगे । अतएव, आइए, चित्त-शुद्धि के लिए हम लोग दृढ़ प्रतिज्ञ हों—कभी भी बुरी बातें न सुनें; बुरी चीजें न देखें; पराई निंदा कभी न करें; दूसरों के दोष ढूँढ़ने के फेर में कभी न पड़ें; स्वप्न में भी किसी के अहित की कामना न करें; धन का लालच हरगिज़ न करें तथा विषय वासनाओं से मुँह-मोड़कर परमात्मा में चित्त पिरोवें !

परमात्मा करें, हम लोग निरंतर स्नेह-सूत्र में बँधे रहें और भगवत् प्राप्ति के मार्ग पर साथ-साथ चलते रहें !

प्रिय मित्र ! नूतन वर्ष आप के लिए सभी प्रकार से सुखदाई हो । आप सदा स्वस्थ व प्रसन्न रहें यही मेरी कामना है !

आप का प्रिय मित्र
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय १ : वल्ली १

प्रिय मित्र, जमशेदपुर

प्रणाम ! २-१-६६

कठोपनिषद् के अध्याय १ पहली वल्ली की चर्चा शुरू की जाती है।

पुराने जमाने में, भारतवर्ष में उद्दालक नामक एक ऋषि रहते थे। ये गौतम वंश के ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम महर्षि अरुण था। महर्षि अरुण अन्न दान करने में नामी थे, जिससे वे वाजश्रवा (नामी अन्न दानी) भी कहलाते थे।

ऋषि उद्दालक को नचिकेता नामक एक पुत्र था। नचिकेता बचपन से ही बुद्धिमान, आज्ञाकारी तथा धर्मात्मा निकला। उसके ऊपर उसके दादा और पिता की संस्कृति की पूरी छाप पड़ी थी।

उस जमाने में 'विश्वजित' नामक यज्ञ करने की प्रथा थी। किसी खास कामना की पूर्त्ति के लिए यह यज्ञ किया जाता था। इस यज्ञ में लोग अपना सब कुछ दान में दे दिया करते थे।

ऋषि उद्दालक ने भी एक बार विश्वजित यज्ञ किया; किंतु अपने पुत्र नचिकेता के प्रति विशेष ममता व रागवश, यज्ञ में अपना सारा धन दान न कर सके। जवान तथा दूध देने वाली गायों को उन्होंने नचिकेता के दूध पीने के लिए रख छोड़ा और बूढ़ी-बूढ़ी जीर्ण-शीर्ण गायों को ही ब्राह्मणों को दान में दिया।

नचिकेता उस समय छोटा लड़का ही था। फिर भी, उसे इस प्रकार का दान पसंद नहीं आया। वह मन ही मन सोचने लगा—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'इस प्रकार के दान से तो पिता जी नरक के ही भागी बनेंगे।'

पिता की शुभकामनावश, नचिकेता का मन विह्वल हो उठा। वह पुनः सोचने-विचारने लगा—'वास्तव में, मैं ही तो पिता जी का अनमोल धन हूँ। मुझे दान किये बिना, विश्वजित यज्ञ की पूर्त्ति कैसे होगी! फिर पिता जी की मनोकामना भी, पूरी कैसे होगी!!'

मन ही मन यों विचार कर, नचिकेता अपने **पिताजी से बोला**—"पिताजी मुझे दान में किनको दीजियेगा?"

ऋषि उद्दालक ब्राह्मणों को दान देने में व्यस्त थे। पुत्र की बातों—मुझे दान में किन को दीजियेगा—को दो बार उन्होंने अनसुनी कर दी और कुछ जवाब नहीं दिया। लेकिन तीसरी बार नचिकेता के जोर देकर कहने पर, वे झल्ला कर हठात् बोल उठे—"मैं तुझे मृत्यु देवता यमराज को दान में देता हूँ।"

प्रिय मित्र! जबान से यह निकलते ही ऋषि उद्दालक का चेहरा उतर गया। उनका दिल बैठने लगा। भावावेश में, जो जबान से निकल चुका था—उसका परिणाम पुत्र—वियोग ही था।

उधर पिता जी की बातों को सुनकर, नचिकेता कुछ अचंभित हुआ। वह मन ही मन विचारने लगा—

"आखिर मुझ से कौन-सी ऐसी भूल हुई, जिसके लिए मुझे यमराज के हवाले किया जा रहा है! मैं तो अधिकतर पिता और गुरु की आज्ञा की प्रतीक्षा किये बिना ही उनकी रुचि के अनुसार खुद काम किया करता हूँ। जब कभी ऐसा करने से चूकता हूँ, तो उनकी आज्ञा पाते-पाते पालन करता हूँ। इसलिए, मेरी गिनती तो अधिकाँश शिष्यों और पुत्रों में उत्तम श्रेणी में और कुछ में ही मध्यम श्रेणी में होगी। अधम श्रेणी में तो मेरी गिनती कभी हो ही नहीं सकती! आखिर, यमराज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का कौन-सा काम मेरे लिए बाकी पड़ा है, जिसके लिए पिता जी मुझे उनके हवाले कर रहे हैं।"

मित्र ! पिता के उपर्युक्त वचन से कोमल हृदय नीचकेता को जबर्दस्त ठेस लगी। उसमें स्वाभिमान की भावनाएँ भड़क पड़ीं। वह नाना प्रकार से सोचने-विचारने लगा। अंत में पिता की शुभ कामना तथा पितृ आज्ञा पालन की भावनाएँ प्रबल हो उठीं। वह अपने पिता जी से बोला।

नचिकेता बोला—पिता जी ! अब तक हमारे पूर्वज तथा दूसरे श्रेष्ठ जन क्रोध तथा आवेश में निकले वचनों का भी पालन करते आये हैं। आप के लिए भी ऐसा ही करना उचित है। आप मुझे यमराज के पास भेजा कर अपना वचन पालन कीजिये ! पिता जी मेरे इस नश्वर शरीर के लिये इतनी ममता क्यों कर रहे हैं ! यह तो खेती की तरह है—जैसे खेती जमाने से उगती और पकती आ रही है वैसे ही प्राणी भी जन्मता और मरता आ रहा है यानी जन्म-मरण का चक्र तो चलता ही रहता है।"

मित्र ! ऋषि उद्दालक धर्म-संकट में पड़ गये। अंत में उन्हें पुत्र की उचित राय माननी पड़ी। वे अपने प्रिय पुत्र नचिकेता को यमराज के पास भेजकर, पुत्र विभोग में अत्यन्त दुःखी रहने लगे।

उधर यमलोक में पहुँचने पर, नचिकेता ने यमराज को नहीं पाया। संयोगवश वे कहीं बाहर गये हुये थे। बिना उनसे मिले, उसने अन्न-जल ग्रहण करना उचित नहीं समझा। वह तीन दिनों तक, भूखे-प्यासे, ही उनके दरवाजे पर पड़ा रह, उनकी बाट जोहता रहा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तीन दिनों के बाद, जब यमराज घर लौटे तो उनकी पत्नी ने नचिकेता के आगमन के बारे में कहा—

वह बोली—स्वामी ! गृहस्थ के घर में ब्राह्मण अतिथि का प्रवेश अग्नि के रूप में होता है। जलादि से उनका उचित सत्कार आवश्यक होता है। जल वगैरह ले जा कर, ब्राह्मण पुत्र नचिकेता का आप उचित अतिथि-सत्कार कीजिये।

और स्वामी ! जिस मंद बुद्धि वाले गृहस्थ के घर में, ब्राह्मण अतिथि भूखा रह जाता है, उस अभागे का सर्वनाश हो जाता है। उसके पुत्र, पशु आदि नष्ट हो जाते हैं। उसके प्रिय वाणी तथा यज्ञादि शुभ कर्मों से होने वाले फल भी तहस-नहस हो जाते हैं। जो वस्तुएँ उसे मिलने वाली होती हैं—वे भी नहीं मिलतीं। उनकी प्राप्ति की प्रतीक्षा, वह करता ही रह जाता है। इस प्रकार से उसकी सभी प्रकार की आशाएँ विफल हो जाती हैं।

स्वामी ! नचिकेता एक पूजनीय ब्राह्मण-पुत्र है। वह ब्राह्मण-अतिथि, हमारे दरवाज़े पर, बिना अन्न-जल के तीन दिनों तक पड़ा रहा। इससे हमें घोर पाप लगा है। अतएव, नचिकेता का अतिथि-सत्कार आप तत्काल कीजिये और पाप का भी प्रायश्चित अवश्य कीजिये।

प्रिय मित्र ! यहाँ ब्राह्मण अतिथि की उपमा अग्नि से दी गई है। वैदिक काल से ही अग्नि को बहुत बड़ा महत्व प्राप्त रहा है। वेद में अग्नि के अनेक मंत्र हैं। ऋग्वेद की उत्पत्ति भी अग्नि से ही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मानी जाती है। अग्नि वास्तव में बहुत लाभदायक है; लेकिन ठीक से नहीं रखने से खतरनाक भी उतना ही है। जिस घर को उजाला करती है उसे मिनटों में खाक भी कर सकती है। ब्राह्मण अतिथि के साथ भी यही बात है। उचित सत्कार कर घर में रखने से वह मुक्ति का मार्ग बताकर भगवान से मिला सकता है। अनादर करने से अग्नि की तरह सर्वनाश का भी कारण बन सकता है।

प्रिय मित्र ! कुछ लोग 'ब्राह्मण अतिथि' पर आपत्ति करते हैं। कहते है—अथिति, अतिथि है चाहे वह किसी भी जाति या वर्ण का हो ! सब का एकसा सत्कार होना चाहिए।

मित्र ! वैदिक काल में जब इन ग्रथों की रचना की गई थी, ब्राह्मण, ब्रह्मज्ञानी होते थे या यों कहिए कि ब्रह्म को जानने वाले ही ब्राह्मण कहलाते थे। ब्रह्मज्ञानी ही ब्रह्म का ज्ञान करा सकता है। ब्रह्मंज्ञानी का गृहस्थ के घर में अतिथि रूप में आना वास्तव में बड़े सौभाग्य की बात है। उसके दर्शन से, संगति व उपदेशों से अनन्त लाभ होंगे। अयोग्य अतिथि से उतने लाभ न होंगे। ऐसे आदर-सत्कार तो जहाँ-तक सँभव हो सब किसी का होना चाहिए।

जमाने के साथ-साथ रस्म-रिवाज भी बदलते हैं। पुराने जमाने में जब हमारे देश की आबादी कम थी। लोग खुश-हाल थे। मेहमानी खूब चलती थी। अभी जब अपनी ही दाल-रोटी मुश्किल से चल पाती है—फिर मेहमानी तो कहने भर की रह गई।

अब विषय-प्रसंग पर आवें !

पत्नी की बातें सुनकर, यमराज जलादि लेकर तुरंत नचिकेता के पास गये। उचित अतिथि-सत्कार कर वे नम्रता से बोले।

यमराज बोले—ब्राह्मण-पुत्र ! तू मेरा पूजनीय अतिथि है। तेरा उचित अतिथि सत्कार अवश्य होना चाहिये था। दुर्भाग्यवश तेरे जैसा माननीय ब्राह्मण अतिथि मेरे दरवाजे पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तीन दिन, तीन रात भूखे पड़ा रहा। इससे मुझे अतिथि सत्कार न करने का घोर पाप लगा है। पाप का प्रायश्चित किये हीं बनेगा।

प्रिय नचिकेता ! मेरे दरवाजे पर तीन दिनों तक भूखे प्यासे पड़े रहने के एवज में तू मुझ से तीन वरदान माँग। और अपने मुँह माँगे वरदानों को मुझ से प्राप्त कर, मुझे पाप से मुक्त कर।

नचिकेता बोला—

जैसी आज्ञा ! **महाराज** ! आपके इच्छानुसार, मैं एक-एक कर तीन वरदान माँगता हूँ—

मेरे पिता जी मुझे आप के पास भेजकर, पुत्र वियोग में अत्यन्त दुःखी हैं। उनके चित्त की शांति जाती रही है। आप उनकी चिंता दूर कर, उन्हें शांति प्रदान करें तथा जब, मैं आपकी आज्ञा से लौटकर उनके पास जाऊँ; तब वे मुझे अपना पुत्र नचिकेता बोल कर पहचान लें; और मुझसे पूर्ववत प्रेम-पूर्वक बातें करें। महाराज ! आपके द्वारा दिये, तीन वरदानों में यही मेरा पहला वरदान है।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! ऐसा ही होगा। तेरे पिता जी को अभी से शांति मिलेगी और वे जीवन भर सुख की नींद सोयेंगे। और जब तू मेरी आज्ञा से घर लौटेगा तब वे, मेरी प्रेरणा से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तुझे अपने पुत्र नचिकेता के रूप में पहचान लेंगे और मृत्यु के मुख से छूटकर तुझे आया हुआ जान अत्यन्त प्रसन्न होंगे।

प्रिय नचिकेता ! तू अब दूसरा वरदान माँग !

नचिकेता बोला—

मृत्यु देवता ! मैंने स्वर्ग की प्रशंसा बहुत सुनी है। स्वर्ग लोक के निवासियों को किसी भी प्रकार का भय नहीं व्यापता। वे बिल्कुल निर्भय रहते हैं। वहाँ बुढ़ापा नहीं आता। आप मृत्यु देवता की भी दाल वहाँ नहीं गलती अर्थात् वहाँ के लोग मरते नहीं। उन्हें भूख-प्यास भी नहीं सताती। वे सभी प्रकार के दुःखों से मुक्त हो, सदा सुख ही भोगते हैं।

ऐसे स्वर्ग की प्राप्ति का साधन अग्नि विद्या कही जाती है। आप उस अग्नि विद्या को भली-भाँति जानते हैं और मैं उसे जानने का इच्छुक हूँ। अतएव, दूसरे वरदान में आप मुझे उस अग्नि विद्या को भली-भाँति सिखलाइए जिसे जानकर स्वर्ग-लोक-वासी अमरत्व-देव भाव-को प्राप्त करते हैं।

तब यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! मैं उस स्वर्ग दायिनी अग्नि विद्या को अच्छी तरह जानता हूँ। उसे मैं तुझे ठीक-ठीक बताता हूँ। तू उसे भली-भाँति समझ ले। यह स्वर्ग प्राप्ति का साधन तथा उसका आधार भी है। यह विद्या अत्यन्त गोपनीय है। यह विद्वानों की बुद्धि रूपी गुफा में छिपी रहती है; अर्थात् सिर्फ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विद्वानों को ही इस अग्नि विद्या की जानकारी रहती है।

फिर यमराज ने नचिकेता को उपर्युक्त अग्निविद्या भली-भाँति बतलाई। अग्नि के लिए कुण्ड बनाने में कितनी और किस प्रकार की ईंटों की आवश्यकता होती है? तथा अग्नि-चयन किस प्रकार से करना चाहिए? आदि बातें उन्होंने उसे अच्छी तरह सिखलाईं।

अग्नि विद्या बताने के बाद **यमराज बोले—**

प्रिय नचिकेता! जो कुछ, तू ने समझा है, मुझे सुना।

तब नचिकेता ने जैसा यमराज से सुना था, हू बहू, वैसा ही सुना दिया। सुनकर, यमराज अत्यन्त प्रसन्न हुए।

वे (यमराज) बोले—

प्रिय नचिकेता! मेरे द्वारा बतलाई गई अग्नि विद्या को तू ने हू-बहू सुना दिया। इससे प्रसन्न होकर, मैं अपनी ओर से तुझे यह चौथा वरदान देता हूँ कि आज से अग्नि विद्या के साथ तेरा नाम जुड़ा रहेगा। यह आगे, नचिकेताग्नि विद्या कहलाएगी। इसके अलावे, पुरस्कार और आशीर्वाद स्वरूप मणियों की यह माला देता हूँ। तू उसे धारण कर।

प्रिय मित्र! मूल श्लोक में सृङ्का शब्द आया है। श्री शंकराचार्य ने सृङ्का शब्द के दो अर्थ—(क) माला और (ख) अनंत शुभ फलों को देने वाला कर्म-विज्ञान—किया है। हो सकता है—महात्मा यमराज ने नचिकेता को कर्म-विज्ञान का भी उपदेश दिया होगा!

मैक्समूलर के मतानुसार तो यह श्लोक (१६) तथा आगे के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दो श्लोक—१७ और १८ कठोपनिषद् में पीछे से जोड़ दिए गये हैं। लेकिन इन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। आत्मतत्व की जानकारी के लिए आगे बढ़ते चलें। शंकाएँ तथा तर्क-वितर्क अध्यात्म-मार्ग के बाधक हैं।

अग्नि-विद्या एक स्वतन्त्र और बड़ा विषय है। इसका वर्णन कठोपनिषद् में नहीं है। इसे जानने के लिए हम लोगों को अलग से अध्ययन करना होगा। दूसरे-दूसरे ग्रंथ पढ़ने होंगे।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जिसने नचिकेताग्नि का तीन बार विधिवत चयन किया है तथा जिसे माता-पिता और गुरु के उपदेश और आशिष् प्राप्त हैं वह जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पा जाता है। और वह ब्रह्म से उत्पन्न ज्ञानवान तथा स्तुति योग्य देव को जान व अनुभव कर उस परम शांति को पाता है, जो मुझे प्राप्त है।

जो अग्निचयन की विधि यानी अग्नि के लिए कुंड बनाने में किस आकार की और कितनी ईंटें लगेंगी ? तथा किस प्रकार से अग्निचयन करना चाहिए ? को भली-भाँति जानकर तीन-बार अग्निचयन करता है; वह जीवन-काल में ही जन्म-मरण के बंधन से बरी हो जाता है। वह शोक-सागर को पार कर इसी मृत्युलोक में ही स्वर्ग सुख पाता है।

प्रिय नचिकेता ! स्वर्ग के साधन अग्नि विद्या मैंने तुझे दूसरे वरदान में बतला दी। जैसा कि मैंने कहा है यह तेरे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नाम से ही पुकारी भी जायेगी । अब तू अपना तीसरा वरदान माँग ।

तब नचिकेता बोला—

मृत्यु देवता ! मरे हुए के बारे में कुछ लोग कहते हैं कि मरने के बाद सिर्फ शरीर का ही नाश होता है । बोलता जीव-आत्मा-का कभी नाश नहीं होता । कोई-कोई कहते हैं कि मरने के बाद सब कुछ नष्ट हो जाता है । मैं भी शंका में हूँ कि वास्तव में सही क्या है ? इसलिए, मरने के बाद जीव रहता है कि नहीं ?—यही आप तीसरे वरदान में मुझे बतलाएँ ।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! मरने के बाद जीव रहता है कि नहीं ? आत्मतत्व का विषय है । यह अत्यन्त गूढ़ है । सहज में समझ में आने वाला नहीं है । मनुष्य को कौन कहे—इस विषय में देवताओं को भी पूर्वकाल में संदेह हुआ था । इस वरदान के लिए तू मुझ पर दबाव मत डाल । इसे तू मुझे वापस कर दे और इसके बदले में कोई दूसरा वरदान माँग ले ।

नचिकेता बोला—मरने के बाद, जीव की क्या गति होती है ? इस विषय में निश्चय ही देवताओं को भी संदेह हुआ था । आपके कथनानुसार इसको समझना भी मुश्किल है । फिर आपके जैसा बताने वाला मिलना भी दुर्लभ है । इस-लिए यह वर मेरे लिए बड़े महत्व का है । इसके समान कोई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दूसरा वर मुझे नहीं जँचता।

यमराज पुनः बोले—

प्रिय नचिकेता ! तू अपने तीसरे वरदान के बदले में सौ वर्ष आयु वाले, बेटे-पोते तथा बहुत से पशु-हाथी, घोड़े, सोना और बड़ा साम्राज्य माँग ले। तू खुद जितने वर्ष जीना चाह, जीते रह।

अगर उपर्युक्त वरदान के बराबर तेरी नजर में कोई दूसरा ही वर हो तो वही माँग ले। अथवा मुँह माँगा धन माँग ले। बराबर रहने वाली जीविका ही माँग ले। **नचिकेता** ! तू इस विशाल भूमि का साम्राट बन जा और राज्य-सुख भोग। तुझे मैं अपने योग बल से इच्छानुसार समस्त भोगों को भोगने वाला किये देता हूँ।

प्रिय नचिकेता ! जो-जो भोग-विलास मृत्यु लोक में नहीं मिलने वाले हैं उन्हें तू यहाँ मन-माना माँग ले। देख, रथ और बाजों के साथ इन अप्सराओं को। ऐसी सुन्दर स्त्रियाँ मृत्यु-लोक में पुरुषों को नसीब नहीं होतीं। तुझे मैं इन्हें देता हूँ। तू ले जा; इनसे सेवा करा; परन्तु मरण सम्बन्धी प्रश्न तू मत पूछ !

नचिकेता बोला—

मृत्यु देवता ! आप ने जिन-जिन भोग्य वस्तुओं की चर्चा की है वे सब के सब क्षणभंगुर हैं। वे कल तक भी रहेंगी या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं, इसमें भी संदेह ही है। फिर भोगों के भोगने से तो शारीरिक शक्ति ही क्षीण होती है। लाभ तो कुछ होता नहीं। आयु मेरी जितना भी लम्बी कीजियेगा, एक न एक दिन खत्म होगी ही। ये देव लोक की रमणियाँ, नाच-गाने, बाजे-गाजे, रथादि यहीं रहें। मुझे इनकी कामना नहीं है।

मृत्यु देवता ! धन से किसी की भी तृप्ति नहीं की जा सकती। मनुष्य जितना ही ज्यादा धन पाता है, उतना ही और पाने की इच्छा करता है। फिर जब आपके दर्शन हो गये हैं तब धन तो मैं यों ही पालूँगा। और जब तक आप यमराज के पद पर बने रहेंगे मैं जीता भी रहूँगा। इतनी कृपा तो आप की मुझ पर, यों ही होगी। इन्हें वरदान के रूप में क्या माँगना है ! तीसरे वरदान में तो आप मुझे मरे हुए जीव के बारे में ही बतलाएँ।

हे मृत्यु देवता ! आप जैसे अजर-अमर महात्माओं के दर्शन, मृत्यु-लोक के वासी—मेरे जैसे मरणशील प्राणी के लिए दुर्लभ हैं। उसे पाकर भी, कौन ऐसा अभागा होगा, जो स्त्री-सुखादि के लिए बहुत समय तक मृत्यु-लोक में जीते रहना चाहेगा ! मैं तो आपके दर्शन मात्र से ही कृत-कृत्य (मुक्त) हो गया हूँ। साँसरिक भोगों की अब चाह नहीं है। चिरकाल तक जीने की भी अभिलाषा नहीं है।

हे मृत्यु देवता ! मरने के बाद जीव (आत्मा) रहता है

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कि नहीं ?—यह जो शंका बराबर से चली आ रही है—उसे आप दूर कीजिये। यह आत्म तत्व का महत्वपूर्ण विषय है। मुझे इसकी जानकारी कराइये। मैं इसके बदले में कोई भी दूसरा वरदान नहीं चाहता।

प्रिय मित्र ! अध्याय एक की पहली बल्ली की वार्ता समाप्त हुई।

नचिकेता अपने तीसरे वरदान पर डटा रहा। कोई भी प्रलोभन उसे डिगा नहीं सका। उस आर्य-पुत्र का कितना उच्च व्यक्तित्व था !

सांसारिक समस्त भोग नश्वर तथा भगवत्-प्राप्ति के मार्ग में बाधक ही हैं। इनकी प्राप्ति से तो तृप्ति के बजाय काम की और जागृति ही होती है। दल-दल में, जैसे पैर नीचे ही धँसते जाते हैं; विषय-वासनाओं में जीव वैसे ही, उत्तरोत्तर फँसता ही जाता है। किन्हीं भी कामनाओं का अंत नहीं होता। जितना पाते जाते हैं, उतना ही और भी पाने की तृष्णा होती जाती है।

इस शत्रु रूप काम को दबाने का एक मात्र उपाय है—इसका त्याग ! न सोचें भोगों के बारे में न भोगें भोगों को ! तभी काम-वासना से जान बचेगी।

यमराज के पास नचिकेता, मानव शरीर में ही गया अथवा मर कर उसकी आत्मा गई आदि शंकाएँ लोग करते हैं। इस संबंध में, मैं आप से इतना ही कहूँगा कि ग्रंथ-कर्त्ता ने गूढ आत्मज्ञान को कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। गूढ़ ज्ञान प्रमुख है। कहानी गौण है। कहानी की सत्यता पर तर्क-वितर्क की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

अकसर लोग, प्रेमिका के मुख की उपमा चन्द्रमा से देते हैं और उसे चन्द्रमुखी कहते हैं। इसका मतलब यह थोड़े ही है कि मुख चन्द्रमा की तरह गोल होता है और उस पर काले-काले धब्बे होते हैं ! ऐसा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अर्थ करने से तो अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। यही बात एक प्रकार से, इस कहानी के साथ भी लागू है।

मित्र ! उपनिषद् में नीचे लिखे शब्द विशेष अर्थ में व्यवहृत हुए हैं। इनका अर्थ शुरू में ही जान लेना अच्छा होगा :—

अध्यात्म— परब्रह्म, परमेश्वर, आत्मा या ब्रह्म संबंधी।

अध्यात्म ज्ञान—ईश्वर अथवा आत्मा का ज्ञान।

अध्यात्म योग—चित्त को विषयों से हटाकर आत्मा में लगा देना।

अन्तःकरण— मन, विचार बुद्धि, विवेक, आत्मा, वह भीतरी इंद्रिय, जो संकल्प, विकल्प, निश्चय, स्मरण तथा सुख दुःखादि का अनुभव करती है।

अपरब्रह्म— सगुण ब्रह्म, साकार ब्रह्म।

आत्मा— ईश्वर का अंश जीव, बोलता जीव, ब्रह्म, हृदय। इस पुस्तक में आत्मा कहीं-कहीं ईश्वर अंश जीव के अर्थ में तो कहीं-कहीं पूर्ण ब्रह्म के अर्थ में व्यवहृत हुई है।

आत्मतत्व— आत्मा का यथार्थ स्वरूप।

आत्म-दर्शन—
आत्म ज्ञान— } आत्मा की जानकारी, जीवधारी आत्मा है; शरीर नहीं तथा समस्त जीवधारियो में एक ही आत्मा बसती है, का सही- सही भान हो जाना।

आध्यात्मिक— जीवात्मा अथवा परमात्मा संबंधी।

आध्यामिक ज्ञान—जीवात्मा अथवा परमात्मा संबंधी ज्ञान।

उपनिषद्— ब्रह्म विद्या जिससे अज्ञान का नाश होता है तथा जिसके द्वारा परमात्मा की प्राप्ति होती है।

कठ— एक ऋषि का नाम, यजुर्वेद का एक उपनिषद् यानी कठोपनिषद्।

जीवन मुक्त— पुनर्जन्म से छुटकारा पा जाना।

निर्गुण ब्रह्म— निराकर ब्रह्म, बिना रूप के परमेश्वर।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परमधाम— ब्रह्म भवन, जहाँ जाकर जीव परमात्मा में मिल जाता है।

परब्रह्म— निर्गुण और निरुपाधि (बिना किसी उपाधि के) ब्रह्म।

प्रेय— प्रिय लगने वाले भोगों के साधन।

वल्ली— पंक्ति, श्रेणी।

बाजश्रवा— बाज माने अन्न और श्रव माने यश, अन्न दान के द्वारा यश प्राप्त करने वाले को बाजश्रवा कहते हैं।

श्रेय— कल्याण का साधन, कल्याण-मार्ग।

हिरण्य गर्भ— ब्रह्मा, वह ज्योतिमय अण्ड जिसमें से ब्रह्मा तथा संपूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी।

अगले पत्र में वल्ली दो की चर्चा की जाएगी। तब तक आप उपर्युक्त शब्दों के अर्थादि याद कर लें ताकि आगे के विषय समझने में आसानी हो।

सप्रेम प्रणाम !

आपका प्रिय मीत,
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय १ : वल्ली २

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

प्रणाम ! ३-१-६६

पिछले पत्र में अध्याय एक की पहली वल्ली की चर्चा की गई है। दूसरी वल्ली की वार्ता शुरू की जाती है।

यमराज के कहने पर, नचिकेता ने एक-एक कर तीन वरदान माँगे; जिनकी चर्चा गत पत्र में की जा चुकी है। प्रथम वरदान में उसने अपने पिता के लिए शाँति माँगी; दूसरे में स्वर्ग प्राप्ति का साधन अग्नि, विद्या का ज्ञान तथा तीसरे में आत्मतत्व का ज्ञान! प्रथम दो वरदानों को तो यमराज ने नचिकेता को सहर्ष दे दिया; किन्तु तीसरे वरदान—आत्म तत्व के ज्ञान को देने में अपनी लाचारी प्रकट की। इस तीसरे वरदान के बदले में उन्होंने दूसरा कोई भी वरदान माँगने के लिए नचिकेता से बार-बार कहा। सभी प्रकार के भोगों को देने को कहा।

परन्तु नचिकेता अपने तीसरे वरदान पर ही डटा रहा। उसने यमराज से साफ-साफ कह दिया कि वह एक मात्र आत्म-दर्शन का ही भूखा था। स्वप्न में भी नश्वर भोगों के बारे में वह न सोच सकता था।

प्रिय मित्र ! वास्तव में, भोगों को दिखा कर, यमराज नचिकेता के चरित्र की परीक्षा ले रहे थे। वे जानना चाहते थे कि नचिकेता में आत्मतत्व के ज्ञान ग्रहण करने की योग्यता है कि नहीं! क्योंकि भोगों में आसक्ति होने से आत्मतत्व का भान नहीं हो सकता। यह बात हमारे और आप—सबके साथ लागू है।

नचिकेता में आत्मतत्व को समझने की योग्यता पाकर, यमराज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बहुत प्रसन्न हुए और आत्म दर्शन का उपदेश देने के लिए सहर्ष तैयार हो गये।

अब दूसरी वल्ली के विषय प्रसंग पर आवें :—

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! संसार में श्रेय और प्रेय दो भिन्न-भिन्न मार्ग जीव के सामने आते हैं। वह अपनी प्रकृति तथा अभिरुचि के अनुसार किसी एक को चुनता है और उस पर चलता है।

श्रेय सुख का साधन है। भगवत् प्राप्ति और परम शांति का रास्ता है। शुरू में यह नीरस तथा कष्टकर प्रतीत होता है किंतु अंत में यह अक्षय सुख प्राप्त कराता है। सद्गुण वाले सज्जन इसी राह को अपनाते हैं और हजारों विघ्न बाधाओं के बावजूद इसी पर चलते हैं। ऐसे लोगों में ईमानदारी, सच्चाई, इत्यादि सभी अच्छे गुण पाये जाते हैं। ईर्ष्या, द्वेषादि से ये दूर रहते हैं। इनका जीवन तपस्वी जैसा होता है।

प्रेय—शुरू में प्रिय लगनेवाला—भोगों का साधन है। स्त्री, पुत्र, धन, यश इत्यादि मृत्युलोक तथा परलोक में जितने भोगों के साधन हैं उनकी प्राप्ति का रास्ता है। इस श्रेय मार्ग पर चलने वाला जीव इन साधनों—स्त्री, धन आदि से प्राप्त भोगों को ही सच्चा सुख मानता है। दर-असल भोगों में शुरू में तत्काल सुख भासता है ; किंतु अंत दुःखद होता है। जो लोग भोगों से प्राप्त इंद्रिय सुखों को ही भ्रमवश सच्चा सुख

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मानते हैं वे इस प्रेय-मार्ग पर ही चलते हैं। ऐसे लोग भगवत् प्राप्ति तथा अक्षय सुख से वंचित रह जाते हैं।

जीव को श्रेय और प्रेय दोनों मार्ग अपनी-अपनी ओर खींचते हैं। जिनके पूर्व जन्म के संस्कार अच्छे रहते हैं तथा इस जन्म में भी संस्कार वाले अच्छे माँ-बाप, संगी-साथी प्राप्त रहते हैं, वे तो इंद्रिय भोगों के क्षणिक सुखों से नहीं लुभाते हैं। वे तो सर्वदा श्रेय मार्ग पर ही चलते हैं। लेकिन जो बेचारे अच्छे संस्कार और अच्छी संगति से वंचित रहते हैं, वे तो असहाय की नाईं इंद्रिय भोगों का शिकार बन प्रेय मार्ग को ही परवश अपनाते हैं। ऐसे लोग लोक-पर लोक दोनों गँवा बैठते हैं।

हे नचिकेता ! जिन भोगों में बहुत से प्राणी फँस जाते हैं ; उन्हें तूने भली-भाँति सोच-समझ कर ठुकरा दिया है। इहलोक तथा स्वर्ग के भोगों की सभी सामग्रियाँ—अप्सराएँ, धन, दौलत साम्राज्य, इत्यादि-इत्यादि—मैंने तुझे ले लेने को कहा ; लेकिन तूने लेने से इनकार कर दिया। निश्चय ही, तू बुद्धिमान, विचारवान और चरित्रवान है।

प्रिय नचिकेता ! ये प्रेय और श्रेय मार्ग एक दूसरे के विरोधी हैं। प्रेय-मार्ग के पथिक को भोगों में ही रस मिलता है। उसे भगवत् भक्ति, सज्जनों की संगति आदि नहीं भातीं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रेय मार्ग का पथिक इन भोगों से विमुख हीं रहता है। उसे त्याग और तपस्या की जिन्दगी पसंद आती है। वह विद्या का अभिलाषी रहता है। तूने समस्त भोगों को लातमार, श्रेय मार्ग को ही अपनाया है। तू वास्तव में विद्या (ज्ञान) का अभिलाषी और भागी है।

प्रिय नचिकेता ! जब अंधे को राह दिखलाने वाला भी अंधा ही मिल जाता है, तब जैसे वह नियत स्थान पर पहुँचने के बजाय, रास्ते में ही भटकता रहता है, वैसे हो अंधकार रूपी अविद्या के भीतर रहते हुए भी जो व्यक्ति मिथ्याभिमानवश अपने को बुद्धिमान और विद्वान मानते हैं, वे जीवन की अंतिम मंजिल-परमधाम-तक पहुँच नहीं पाते। वे तो जन्म-मरण के चक्र में पड़े रह, नाना योनियों में भ्रमते रहते हैं।

प्रिय मित्र ! यहाँ एक बात अत्यन्त उल्लेखनीय है—चाहे जितनी भी पुस्तकें हम लोग पढ़ जायँ; परीक्षाएँ पास कर जायँ; विविध भाषाएँ जान जायँ; एम० ए० आदि की चाहे जितनी भी डिग्रियाँ हासिल करलें, अन्तःकरण के निर्मल हुए बिना ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। बिना ज्ञान प्राप्त किए, जो लोग सिर्फ शास्त्रों को पढ़कर ही समाज की अगुआई करते हैं वे लोग अपने साथ-साथ समाज को भी डुबो देते हैं। यहाँ ऐसे लोगों की तुलना अंधों को राह दिखलाने वाले अंधे से की गई है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! उपर्युक्त प्रकार के मिथ्याभिमानी अविवेकी व्यक्ति को जीवन का अंतिम लक्ष्य-निर्वाण पाना-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं सूझता । दृश्यमान लोक और पदार्थों को ही वे सब कुछ समझते हैं । इससे उनका मन, स्त्री, पुत्र धनादि में ही रमा रहता है । उनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य, भोगों का भोगना ही रह जाता है । परलोक तो उन्हें सूझता ही नहीं । कर्मों के फल को उन्हें भोगना ही पड़ेगा—इसका भी डर नहीं रहने के कारण वे प्रमादवश (लापरवाही से) मन-माना करते हैं । ऐसे लोग जन्म-मरण को नहीं तर पाते । ये तो मेरे चंगुल में ही फँसे रहते हैं ।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा के बारे में जानना सहज नहीं है । बहुतों को इसके विषय में सुनने का ही अवसर नहीं मिलता । वे तो भोग वस्तुओं के जुटाने और उन्हें भोगने में ही व्यस्त रहते हैं । उन्हें अवकाश कहाँ कि वे आत्मा-परमात्मा के बारे में सुनें और सोचें ! बहुत लोग मलीन मन तथा मंद बुद्धि के कारण, सुनकर भी समझ नहीं पाते । यह आत्मतत्व का विषय इतना गूढ़ है कि इसके जानने वालों में भी विरले ही कोई तीव्र बुद्धि वाले दूसरों को समझा पाते हैं । इस आत्म-तत्व का वर्णन करने वाले गुरु और इसे सुनकर समझने वाला शिष्य दोनों असाधारण व्यक्ति हैं और अत्यन्त दुर्लभ हैं ।

यह आत्मतत्व का विषय जिसे तू नचिकेता ! जानना चाहता है, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है । इसे समझाना और समझना कठिन से भी कठिन है । यह तर्क से सर्वथा परे है । एक इसे सूक्ष्म

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहेगा तो दूसरा उससे भी सूक्ष्म और तीसरा उससे भी सूक्ष्म। फिर तर्क में कुतर्क आ जाएगा। विशेषज्ञ आत्मदर्शी गुरु ही योग्य जिज्ञासु शिष्य को आत्मतत्व का भान करा सकते हैं। अयोग्य गुरु से सुन व चिन्तन कर भी, शिष्य आत्मतत्व का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता।

प्रिय नचिकेता! तेरी बुद्धि शुद्ध और सात्विक है। तेरी निष्ठा भी सच्ची और निर्मल है। तेरी जैसी बुद्धि और निष्ठा निरा तार्किक गुरु से नहीं प्राप्त हो सकती। ये तो कुशल आत्मदर्शी गुरु की संगति और उपदेशादि से ही प्राप्त होती हैं। तेरे जैसा गूढ़ आध्यात्मिक प्रश्न पूछने वाला शिष्य पाना भी गुरु के लिए गौरव की ही बात है। भगवान् करें; तेरे जैसा गूढ़ प्रश्न पूछने वाले शिष्य मिला करें।

प्रिय नचिकेता! इस लोक तथा स्वर्ग लोक की भोग-सामग्रियों की प्राप्ति के लिए किये गये समस्त कर्मों के फलरूपी खजाना कुबेर का खजाना नहीं होता। मुझे यह अच्छी तरह मालूम है कि प्राणी अपने कर्म-फलों को भोगते-भोगते कर्म-फल रूपी खजाने को खाली कर देता है। सदा रहने वाले, अविनाशी परमात्मा की प्राप्ति तो निष्काम भाव से नियत कर्मों के करने से ही होती है। नचिकेताग्नि के चयनादि के दौरान में मैंने समस्त कर्मों को निष्काम भाव से करके ही, परमात्मा की प्राप्ति की है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! धर्म-मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति दो प्रकार के पाये जाते हैं। एक प्रकार का व्यक्ति पूजा-पाठ दान विविध प्रकार से दूसरों का उपकार, प्रार्थनादि किसी खास कामनावश करते हैं। कोई अपने तथा अन्य परिवार के सुख के लिए, कोई अपने बच्चों को विद्वान, बड़ा आदमी व धनी बनाने की कामना से, तो कोई खास दुःख से मुक्त होने के लिए ही। अधिकांश लोग इसी प्रकार की कामना रखते हैं। खास करके महिलाएँ, जब मंदिर, गिरजादि देवालयों में जाती हैं तो तरह-तरह की कामनाएँ करती हैं। अपने इष्ट देव से बहुत चीजों की फरमाइश करती हैं। कोई अपने पति के लिए, तो कोई अपनी संतान के सुखादि के लिए प्रार्थना करती हैं।

उपर्युक्त प्रकार के प्राणियों में कुछ लोग, कुछ ऊपर उठ जाते हैं—तो ये दानादि इस मनसा से करते हैं कि इस जन्म में देने से परलोक में उन्हें ये मिलेंगे। भगवान् के खाता में ये उनके नाम में जमा हो जायेंगे। यहाँ तक कि लोग परलोक में पाने की मनसा से औरत तक को दान में देते हैं। और जिसको दान देते हैं, उसको औरत की कीमत के रूप में कुछ रुपये देकर वापस ले लेते हैं। खास कर पहले राजा लोग ऐसा किया करते थे।

इस औरत-दान की प्रथा ने एक बार बड़ी समस्या खड़ी कर दी थी। बात ऐसी हुई कि एक राजा ने अपनी रानी को पण्डित को दान में दे दिया। सोचा, प्रथा के अनुसार, पण्डित को धन देकर रानी को वापस ले लेंगे। इधर दान में, रानी को लेने वाला पण्डित बड़ा मक्कार निकला। उसने कहा—"अब रानी मेरी है। मैं किसी भी कीमत पर अब वापस नहीं दूँगा।" राजा परे बड़े फेर में। किसी तरह मामला सुलझाया गया।

उपर्युक्त प्रकार के सभी प्राणी प्रेय (प्रिय भासने वाले) मार्ग के गामी हैं। वे अपनी पुण्य कमाई के अधिकांश भाग को इसी लोक में खर्च कर अपने मनोबांछित फल को पा लेते हैं। भगवान् उन्हें देते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। एक महाशय ने तो अपने सारे पुण्य की कमाई की बाजी अपनी प्रेमिका के पाने में लगा दी। उन्होने भगवान् से प्रार्थना की—"हे भगवन् ! मेरे पुण्य-खाते में जो कुछ जमा हो, उसके एवज में मुझे मेरी प्रेमिका मिल जाय।"

भगवान् ने उनकी बिनती सुन ली। उन्हें उनकी प्रेमिका मिली। इस तरह उन्होंने अपनी पुण्य-कमाई इसी लोक में खर्च कर दी। पूछने पर ये कहते हैं—"मेरी पुण्य-कमाई स्वर्ग पाने के लिए ही तो थी। मैंने उसे यहीं पा लिया। मेरी प्रेमिका ने मेरे लिए स्वर्ग इसी लोक में ला दिया।" उनका स्वर्ग उन्हें ही मुबारक हो !

मित्र ! एक बात मैं तुझ से कहूँ ! ये स्वर्ग और नर्क क्या हैं ? मन के दो पहलू हैं। जब हम लोगों से कोई अच्छा काम—जैसे भूखे को खिला देना, दीन-दुःखियों तथा लाचारों को सहारा दे देना, अपने जिम्मे के कामों को ही भली-भाँति से कर देना इत्यादि—बन पड़ता है, तो खुशी होती है और मन प्रसन्न हो जाता है। मन की प्रसन्नता का यह पहलू ही स्वर्ग है।

जब कोई बुरा काम हम लोगों से हो जाता है तो भीतर से दिल कोसता है। ग्लानि होती है। मन अप्रसन्न व खिन्न हो जाता है। मन की अप्रसन्नता की यह पहल ही नर्क है। मोटे शब्दों में प्रसन्न मन स्वर्ग और अप्रसन्न मन नर्क।

प्रिय मित्र ! घर-गृहस्थी सुन्दर हो। चिर संगिनी मन माफिक हो, शरीर स्वस्थ और सत् कर्मों में लगा हो, फिर जो कुछ हो उससे संतुष्ट रह चित्त प्रसन्न रहता हो तो वाकई में स्वर्ग यही है। इससे उस महाशय का कहना कि उनका स्वर्ग यहीं, इसी लोक में मिल गया है, एक प्रकार से सही ही है। लेकिन ये जनाब हैं प्रेय-पथ के ही पथिक ! ये अपने को भगवत् प्राप्ति से वंचित ही करते हैं।

प्रेम मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति पुण्य-कमाई पूरी होने पर मरने के बाद स्वर्ग लोक को जाते हैं। वहाँ अपनी पुण्य-कमाई की लागत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भर सुख भोगते हैं। खत्म होने पर पुनः जन्म लेकर इस संसार में अवतरित होते हैं। उन्हें सही माने में निर्वाण नही प्राप्त होता।

दूसरे श्रेय मार्ग पर चलने वाले प्राणी, भगवान के सिवा और कुछ नहीं चाहते। वे किसी भी प्रकार के सुख की कामना नहीं करते। भगवान् से वे यही कहते हैं—"हे भगवन्! मैं तुझमें ही रत रहूँ। मुझे और कुछ नहीं चाहिए।"

वे बीमारी से ग्रस्त रहेंगे; लेकिन भगवान् से कभी अर्ज नहीं करेंगे कि मुझे आराम कर दो, हे भगवन्! उनका प्यारा पुत्र अगर मरण शय्या पर पड़ा हो, तो, वे ये नहीं कहेंगे कि हे भगवन्! इसे जीवन दान दो। वे ज्यादा से ज्यादा यही कहेंगे कि—"भगवन्! पुत्र तेरा है—मेरा नहीं। मैं तो रखवाला हूँ। ले जाना चाहता है इसे ले जा। मेरे पास छोड़ना चाहता है तो रख छोड़ यानी जीवन-दान दे। मैं देख-भाल, सेवा-शुश्रूषादि करूँगा।"

इस प्रकार से श्रेय मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति खुद भगवान् को ही प्राप्त कर उनमें ही मिल जाता है। वह निर्वाण पा जाता है।

अब आप को उपर्युक्त दोनों मार्गों में जो पसंद आये, चुन लीजिए और उसी पर चलिए।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता! जिन भोगों के लिए यज्ञ, तप, दानादि अनेक प्रकार के शुभ कर्म किये जाते हैं वे सबके सब स्वर्ग में उपलब्ध हैं। स्वर्ग ही जगत का आधार भी है। वेदों में भी इसकी प्रशंसा बहुत की गई है। यह प्रशंसा के योग्य है भी। यह चिरकाल तक कायम रहने वाला है। ऐसे मन-मोहक स्वर्ग की उपेक्षा विरले ही कर पाते हैं। अधिकतर तो इसके लिए

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ललचते ही रहते हैं। वरदान के रूप में दिए जाने पर भी तू ने इसे ठुकरा दिया। तू बड़ा ही बुद्धिमान है। नचिकेता ! तू सर्वगुणसम्पन्न है।

प्रिय मित्र ! जीव ईश्वर का ही अंश है। इसका लक्ष्य उन्हीं में मिल जाना है। यही भगवत् प्राप्ति है। जब तक उनकी प्राप्ति नहीं होती जीव नाना योनियों में भ्रमता रहता है। जन्म-मरण का दुसह दुःख झेलता रहता है।

शुभ कर्मों का फल स्वर्ग प्राप्ति भी है। यहाँ मनचाहे सुख मिलते हैं। स्वर्ग पाना भी कम महत्व की बात नहीं है। परन्तु भगवत् प्राप्ति निश्चय ही, इससे बढ़कर है; क्योंकि स्वर्ग लोक से जीव को एक-न-एक दिन मृत्यु लोक में आना ही पड़ता है। स्वर्ग के वासी जन्म-मरण से छुटकारा नहीं पा जाते।

सच पूछिये, तो स्वर्ग भी भगवत् प्राप्ति के मार्ग में बाधक ही है; एक दुर्गम पहाड़ है, माया जाल महा सागर है। जीव अनेकानेक विघ्न-बाधाओं को पार करता हुआ अनेक जन्मों के प्रयास से भगवान् के करीब तक जा भी पाता है, तो, रास्ते में स्वर्ग आ जाता है। अधिकांश, इसी के मन मोहक भोगों में लटपटाकर, यहीं रुक जाते हैं। फलतः भगवत् प्राप्ति से वंचित रह जाते हैं।

यमराज, नचिकेता को इसी स्वर्ग को तीसरे वरदान में दे रहे थे; लेकिन उसने लेने से इनकार कर दिया। वह जानता था कि स्वर्ग की प्राप्ति, भगवत् प्राप्ति के बराबर नहीं है। फिर वह घाटे का सौदा करे ही क्यों !

प्रिय मित्र ! अब विषय-प्रसंग पर आवें। यहीं अध्याय १ के वल्ली दो के बारहवें श्लोक से यमराज आत्मतत्व का उपदेश देना शुरू करते हैं। अब तक तो इधर-उधर की ही बातें होती आ रही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हैं, जो भूमिका के रूप में ही हैं। आगे, आप, चित्त विशेष एकाग्र कर, पढ़ें।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! पुरातन देव परमात्मा, इस विशाल और दुर्गम जगत के कण-कण में व्याप्त हैं। यहाँ तक कि जीव मात्र के हृदय में ही विराजमान हैं। फिर भी इनके दर्शन और इनकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ हैं; क्योंकि अपने योग माया से ये इस तरह से छिपे रहते हैं कि शरीर में रहते हुए भी दिखलाई नहीं पड़ते।

बुद्धिमान और धैर्यवान साधक अपने चित्त को विषय-वासनाओं से हटाकर; परमात्मा में ही पिरोकर उनकी जानकारी प्राप्त करते हैं। उन्हें उनके अस्तित्व का आभास होता है। प्रभु को अपने शरीर में ही विराजमान पाकर वे हर्ष और शोक दोनों को पार कर जाते हैं। वे न दुःख से दुःखी होते हैं न हर्ष से इठलाते हैं। उनका चित्त कभी विचलित नहीं होता।

प्रिय मित्र ! आश्चर्य तो यही है कि जो प्रभु हृदय में ही विराजमान हैं उन्हें हम लोग बाहर-बाहर ही ढूँढ़ते फिरते हैं। विषय-वासनाओं में लिप्त रहने के कारण ज्ञान-चक्षु पर परदा पड़ा रहता है; जिससे परमात्मा का आभास मिल नहीं पाता। वासनाओं से अवकाश ले, आइए, भगवान् को अपने अन्दर ही टटोलें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! आत्मतत्व का इच्छुक मनुष्य पहले कुशल आचार्य से आत्मा के विषय में भली-भाँति सुनता है। सुनकर, मनन करता है। तदोपरान्त, चित्त एकाग्र कर, सुने हुए को दिल में बैठाता है। इस तरह से साधना करते-करते जब उसे आत्मा का सही बोध हो जाता है तब उसे परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है। फिर उसे अनंत सुख मिलता है। नचिकेता ! तुझे तो भगवान् की प्राप्ति होगी ही। तेरे लिए, तो मेरे जाने में, ब्रह्मभवन यानी परमधाम का दरवाजा खुला है। तू इसका भागी है।

मित्र ! नचिकेता आत्मतत्व के ज्ञान का भूखा था। यमराज की बातें सुन-सुन कर उसकी जिज्ञासा और भी बढ़ती गई। वह चाहता था कि यमराज अब अविलम्ब आत्मतत्व का उपदेश दें। जो उन्हें आत्मा के बारे में मालूम था उसे वे शीघ्र बतावें। उनकी इधर-उधर की बातें, खास करके अपनी तारीफ उनके मुँह से बार-बार सुनकर वह अपने पहले प्रश्न को ही दूसरे शब्दों में दुहराता है। वह पूछता है।

नचिकेता बोला—

महाराज ! जिस आत्मा को आप धर्म-अधर्म, कार्य-कारण, भूत-भविष्यत् इत्यादि सभी से परे पाते हैं ;—उस आत्मा के बारे में मुझे आप बतलाएँ।

तब यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! जिस परम पद (गमनीय स्थान) का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्णन सारे वेद करते हैं; जिसकी प्राप्ति के लिए सभी प्रकार के तप किये जाते हैं तथा जिसके लिए साधक ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते हैं—उस पद को मैं तुझे संक्षेप में बताता हूँ। तू सुन—वह पद 'ॐ' ही है। यह 'ॐ' अक्षर ही ब्रह्म है।

'ॐ' अक्षर ही परब्रह्म और अपरब्रह्म अथवा सगुण और निर्गुण ब्रह्म दोनों का प्रतीक है। इस तत्व को भली-भाँति जान कर साधकगण सगुण व निर्गुण, दोनों में से किसी भी अभीष्ट (मान्य) रूप ब्रह्म को पा लेते हैं।

प्रिय मित्र ! 'ॐ' अक्षर का प्रयोग शास्त्रों में बहुत हुआ है। इसको महानता भी बहुत दी गई है। इस एक अक्षर 'ॐ' के अनेक अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से किये जाते हैं। थोड़े में जैसे शिवलिंग, शिव का ही प्रतीक है; जैसे किसी भी देश का राष्ट्रीय झंडा उस देश के मान-मर्यादा का प्रतीक है तथा जैसे सम्राट का ताज, शक्ति और राजत्व का प्रतीक है वैसे ही 'ॐ' अक्षर ब्रह्मादि का प्रतीक है। यह सगुण और निर्गुण दोनों तरह के ब्रह्म का प्रतीक है। जैसे भक्त पत्थर के शिवलिंग में शिव को पाता है, वैसे ही लोग अक्षर 'ॐ' में ही निराकार और साकार दोनों प्रकार के ब्रह्म को पाते हैं। परमात्मा के अनेक नामों में 'ॐ' सबसे अच्छा नाम माना गया है।

हम लोगों के देश का तिरंगा झंडा तीन रंग के कपड़े से बना होता है; लेकिन उसका महत्व कितना बड़ा होता है! लोगों के दिल में उसकी प्रतिष्ठा कितनी बड़ी होती है। धर्म शास्त्रों में 'ॐ' अक्षर का भी वैसा ही महत्व है। यही 'ॐ' ही परमपद (परमधाम) का भी द्योतक है।

मित्र ! ग्रंथकर्त्ता ने मूल श्लोक में पद शब्द का व्यवहार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किया है। 'ॐ' अक्षर को ही पद का प्रतीक माना है। 'पद' शब्द के अनेक अर्थ होते हैं; जैसे—रास्ता, स्थान, निवास-स्थान, स्थिति, पद-चिह्न गन्तव्य स्थान इत्यादि। यहाँ पद का अर्थ गन्तव्य स्थान यानी परम धाम ही माना गया है। 'ॐ' को परम धाम और सगुण तथा निर्गुण दोनों प्रकार के ब्रह्म का प्रतीक माना गया है। 'ॐ' को मतलब है ब्रह्म को जानना। फिर ब्रह्म को जान लेने पर ब्रह्म की जानने का प्राप्ति भी हो ही जाती है। उनकी प्राप्ति ही परमपद (परमधाम) की भी प्राप्ति है।

यमराज आगे बोले :—

प्रिय नचिकेता ! परब्रह्म और अपरब्रह्म दोनों की प्राप्ति के लिए ओंकार रूपी अवलम्बन (सहारा) ही उत्तमोत्तम है। यही एक मात्र सर्व श्रेष्ठ अवलम्बन है। इसी के सहारे प्राणी ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है और ब्रह्मरूप बन जाता है। अर्थात् भगवान् पर पूर्ण भरोसा करके उन्हीं के सहारे जीनें से जीव निश्चय ही उन्हीं को प्राप्त करता है।

हे नचिकेता ! यह ज्ञान स्वरूप आत्मा न जन्मती है न मरती है। न यह स्वयम् किसी से हुई है न कोई भी इससे हुआ है। यह सदा एक-सी रहने वाली और पुरातन है। शरीर के नाश होने पर भी इस आत्मा का नाश नहीं होता।

यह आत्मा न किसी को मारती है न किसी के द्वारा मारी जा सकती है। जो अपने को इस आत्मा को मारने वाला मानता है और जो मारे जाने की आशंका करता है—वे दोनों ही भूल करते हैं। वे भ्रमवश ही ऐसा सोचते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वास्तव में, किसी को मारने वाला शरीर को ही मारता व नष्ट करता है। आत्मा तो शरीर से निकल जाती है। वह तो किसी के पंजे में आती नहीं। शरीर के नाश से ही भ्रमवश लोग, आत्मा का विनाश समझ लेते हैं।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है तथा महान् से भी महान् है। यह हर जीव के हृदय रूपी गुफा में ही विराजमान है। जब जीव सभी प्रकार की इच्छाओं को त्याग कर कामना रहित व निश्चिन्त हो जाता है और जब उसका अन्तःकरण बिलकुल निर्मल हो जाता है तब उसे अपने अन्दर की आत्मा का भान होता है। तब ही उसकी महानता में भी प्रतीति होती है। फिर तो वह शोक-रहित हो निमग्न हो जाता है।

यह आत्मा विलक्षण है। बैठी हुई भी दूर तक दौड़ लगाती है। सोती हुई भी चलती है। यह एक ही साथ खुश भी है और खुश न भी है। दर-असल यह आत्मा सब में व्याप्त है। सब ठौर है। निर्विकार और निर्लेप है। यह सर्व शक्तिमान है। फिर ऐसी आत्मा के लिए—बैठने, चलने, सोने, जागने, खुश व नाखुश होने इत्यादि की कल्पना करनी ही फिजूल हैं।

ऐसी विचित्र आत्मा को, **नचिकेता** ! मेरे जैसा कुशल सिद्ध प्राणी ही जान सकता है। दूसरे इसे जान नहीं सकते। अर्थात् आत्मा की जानकारी सहज में सब किसी को प्राप्त नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होती। इसे कोई-कोई सिद्ध व्यक्ति ही जान पाते हैं।

प्रिय नचिकेता! यह आत्मा जीव के शरीर में रहती हुई भी खुद अशरीरी है। शरीर में उम्र के फेर से बचपन, जवानी, बुढ़ापादि परिवर्त्तन होते हैं। इनका असर आत्मा पर नहीं होता। वह तो ज्यों की त्यों बनी रहती है। इस सर्व-व्यापी आत्मा को जान लेने के बाद बुद्धिमान जन कभी दुःखी नहीं होते।

प्रिय मित्र—सच पूछिए, तो सदा प्रसन्न चित्त रहना ही आत्म-ज्ञान-प्राप्ति की निशानी है। जिस प्रकार घना से घना अँधेरा भी सूर्य की किरण आते ही गायब हो जाता है; उसी प्रकार आत्मा का ज्ञान होते ही, सारे दुःख दूर हो जाते हैं। आत्म-ज्ञानी के चेहरे पर ग्लानि की रेखाएँ कभी नहीं पाइएगा। आपने कुछ साधु-संतों को देखा होगा। उनके चेहरे पर मुस्कुराहट बराबर छिटकती रहती है। पास में एक नया पैसा भी नहीं है; फिर भी खुश हैं। इसका मतलब उनको आत्मा की जानकारी हो गई है। उन्हें मालूम हो गया है कि वे शरीर नहीं हैं। वे आत्मा हैं। दुःखादि का संबंध तो सिर्फ शरीर से है। आत्मा तो सत् चित् आनन्द है। उसे दुःख काहे का! आत्मदर्शी तो निडर, निर्द्वन्द्व व निमग्न हो विचरता है। ग्लानि तो उसे छू नहीं पाती।

दूसरी तरफ अधिकतर लोगों को देखियेगा कि वे धनी हैं, विद्वान् हैं; अच्छे ओहदे पर हैं, अच्छा लेक्चर दे लेते हैं; समाज में मान-मर्यादा है किन्तु उनके चेहरे पर उदासी है। इसका मतलब उनको आत्मा का बोध नहीं हुआ है। जो कुछ उन्हें प्राप्त है वह आत्मज्ञान के अभाव में उनके लिए झंझट और उलझन ही पैदा करते हैं। चिंता ही के बीज बोते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! इस आत्मा का बोध सिर्फ वेद-शास्त्रों के पढ़ने से उपदेशों को सुनने से तथा निरी बुद्धि से नहीं होता। इसका ज्ञान तो पवित्र मन से चिन्तन मननादि से आपसे आप होता है। यह तो अपना आभास आप कराती है। अर्थात् पवित्र मन व निःस्वार्थ भाव से प्रार्थना, चिन्तन और मनन करते-करते प्राणी आत्मा को खुद जान जाता है। उसे अपने शरीर के भीतर ही आत्मा के अस्तित्व का आभास मिल जाता है। उसकी तेज-पुंज-ज्योति शरीर के भीतर ही प्रज्वलित प्रतीत हो जाती है।

फिर तो मित्र ! अतुलनीय आनन्द मिलता है। इंद्रिय-सुख तो उस आनन्द के प्रसंगों में नही हैं। अतएव, मैं आप से कहूँगा—दिन-रात के २४ घंटों में कुछ क्षण भी आत्मा को अपने अन्दर देखने का प्रयत्न करने को। इंद्रिय भोगों में न लिपटे रहें। कृत्रिम साधनों से चेहरे को आकर्षक बनाने के बजाय मन को ही निर्मल करने का प्रयास करें। कम से कम, दोनों साथ-साथ भी तो करें।

जरा आप जीवन के गुजरे दिनों पर तो दृष्टि डालें। जीवन के अधिकांश भाग तो भोगों के भोगने में ही बीते। शेष भी बीतता जा रहा है। अब भी तो चेतें। किसी कवि ने कहा है न !—

बहुत गई थोड़ी रही, मनुआ अब भी चेत।
काल चिरइयाँ चुग रही, निस दिन आयु खेत॥

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जो पापी हैं, जो दुराचारी हैं, जो इंद्रियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

के गुलाम हैं, जो चंचल मन वाले हैं और जो अशांत चित्त वाले हैं, वे आत्मा की जानकारी तथा प्राप्ति ज्ञान द्वारा भी नहीं कर पाते। ऐसे लोग आत्म-ज्ञान के अधिकारी ही नहीं होते। अर्थात् कोई भी अन्तःकरण को निर्मल किये बग़ैर आत्मतत्व को नहीं जान सकता। चित्त में कलुष रखने, मन वचन और कर्म किसी के द्वारा भी पाप करने पर, निरा पढ़ने, सुनने, गुनने और मनने पर आत्मा का बोध नहीं होगा।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा के लिए ब्राह्मण और क्षत्रिय भोजन के भात के समान है तथा मृत्यु शाकादि की तरह है। ऐसी विलक्षण और प्रभावशाली आत्मा को भला, कोई कैसे जान सकेगा ! अर्थात् धर्म को जानने वाले विद्वान् और ज्ञानी ब्राह्मण, रक्षा करने वाले सामर्थ्यवान क्षत्रिय तथा जीवों को हनन करने वाली मृत्यु की आत्मा के सामने कोई हस्ती नहीं है। ये तो निरा, भात-दाल और तरकारी की तरह हैं। खाया और पचाया। आत्मा को इन्हें (ब्राह्मण, क्षत्रिय और मृत्यु) मिटाने में क्या देर है ! यह इतनी शक्तिशाली है कि जगत को पल मारते बना व मिटा दे। दिल में आया जगत बने !—बन गया। मिट जाय !—मिट गया। इतनी शक्ति है इस आत्मा में। ऐसी अनोखी तथा शक्तिशाली आत्मा को कौन जनता है कि वह कहाँ है ? अर्थात् इस आत्मा को जानना कठिन से भी कठिन है। इसकी जानकारी और प्राप्ति आत्म-बुद्धि तथा सतत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रयत्न से ही होती है।

प्रिय मित्र ! अध्याय १ की दूसरी वल्ली की वार्ता समाप्त हुई। तीसरी वल्ली की चर्चा अगले पत्र में की जाएगी।

इस वल्ली में साफ-साफ बता दिया गया है कि आत्मतत्व के ज्ञान की उपलब्धि का साधन चित्त-शुद्धि है। चाहे हम लोग जितना भी पढ़ें, लिखें, धर्मोपदेश सुनें, अपने अन्तः करण को निर्मल किये वगैर आत्मा को जान व पहचान नहीं सकेंगे। अतएव, अपने अन्तः करण के विकारों—ईर्ष्या, द्वेष, मद-लोभादि को दूर करने में लग जायँ। उन्हें चुन-चन कर निकाल फेकें। अपने अन्दर की द्वेषाग्नि को बुझा दें तथा कामना को बहरा दें। फिर, मित्र ! प्रभु घर बैठे मिलेंगे। खुद अपनायेंगे। अपना आभास आप कराएँगे। मैं आजमा चुका हूँ। आप आजमा कर देखिए। चूकिए नहीं।

प्रिय मित्र ! इस वल्ली के शुरू में ही श्रेय और प्रेय-मार्ग की चर्चा की गई है। श्रेय-मार्ग परमधाम को जाता है। इस पर चल कर प्राणी भगवान् की प्राप्ति कर निर्वाण पा जाता है। प्रेय-मार्ग विपरीत दिशा में जाता है। इस पर चल कर प्राणी भगवत् भक्ति से विमुख हो जाता है। इंद्रिय भोगों के भोगने में ही फँसा रह जीवन के मुख्य उद्देश्य भगवत्-प्राप्ति से वंचित रह जाता है।

उपर्युक्त श्रेय और प्रेय-दोनों मार्ग सब प्राणियों के लिए समान रूप से खुले रहते हैं। अपने जीवन-काल में जीव किसी एक पर चलने को स्वतंत्र रहता है। अब सोचने की बात है कि दोनों मार्गों के गुण-दोषों को जानते हुए भी अधिकांश लोग प्रेय-मार्ग पर ही क्यों चलते हैं ? जीवन के मुख्य उद्देश्य से विचलित क्यों होते हैं ?

कोई-कोई कहते हैं—"वे अपनी स्वभाव-जन्य कमजोरियों, पूर्व-जन्म के संस्कारों, दैव और भाग्य (किस्मत) के वशीभूत होकर ही अहित के राह पर चलते हैं। वे ऐसा करने को मजबूर रहते हैं।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कोई-कोई, कहते हैं—"भगवान् की प्रेरणा से ही इनसान अच्छा-बुरा सब कुछ करता है।"

आखिर, **मित्र** ! ये भाग्य, दैव, पूर्व-संस्कार स्वभाव-जन्य कमजोरियाँ क्या हैं ? ये हमारे अच्छे-बुरे किये—कामों के ही फल हैं। आज जो करते हैं—उनका फल ही कालान्तर में भाग्य, दैव, पूर्व-संस्कार, स्वभाव-जन्म कमजोरी इत्यादि के रूप में प्रकट होते हैं और अनेक नामों से पुकारे जाते हैं। अच्छा-बुरा जो कुछ भी हम लोग करते हैं उनकी छाप हमारे अन्तःकरण पर संस्कार के रूप में पड़ती जाती है। दूसरे जन्म में भी इन संस्कारों को जीव अपने साथ वैसे ही ले जाता है, जैसे वायु फूल के गंध को उड़ा ले जाती है। संस्कार ही जीव के जीवन की सच्ची कमाई है।

मित्र ! उपर्युक्त संस्कार का ही नाम भाग्य, दैव, नियति इत्यादि हैं। स्वभाव-जन्य कमजोरियाँ भी इसी का प्रतिफल हैं। इस प्रकार से, जीव अपने भाग्य का निर्माता आप है। अपनी किस्मत को वह खुद बनाता है। किस्मत उसे नहीं बनाती। किस्मत उसकी चेरी है न कि वह किस्मत की।

जैसे कल का बिगड़ा हुआ काम, आज सुधारा जा सकता है वैसे ही पूर्वकृत कर्मों के फलस्वरूप, पड़े संस्कार भी बदले जा सकते हैं। अर्थात् भाग्य, दैव, नियति इत्यादि पुरुषार्थ से पलटे जा सकते हैं। तब इतना जरूर है कि जिसके पूर्व कर्मों के फलरूपी कमाई यानी किस्मत अच्छी नहीं है उसे जीवन में संघर्ष विशेष करना पड़ेगा। उसके जीवन-पत्र में बुरी किस्मत यानी अपने पूर्वकृत कर्मों के फल काँटा, खाईं, पहाड़ादि के रूप में आएँगी और रुकावटें डालेंगी। किंतु पुरुषार्थी जीव इन बाधाओं को लाँघता हुआ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता जायेगा। उसे ये बाधाएँ रोक नहीं सकेंगी, बशर्ते वह अपने धुन में पक्का हो। सफल जीवन बिताने में, उसे बुरी किस्मत रोक न सकेगी और न भगवत्-प्राप्ति से ही विमुख कर सकेगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मगर **मित्र** ! अगर, जीवन-पथ में कहीं आलस जी से यारी हुई, तब तो सब गुड़ मिट्टी। ये तो कहेंगे—"यार ! चुप चाप, हाथ पर हाथ रख बैठ। जो किस्मत में होगा, सो होगा।" इन से जरूर बचिहो मित्र ! इनको पास न फटकने दी हो।

और **मित्र** ! जिनके पूर्वकृत कर्मों के फल यानी संस्कार (भाग्य) अच्छे रहते हैं उनका जीवन-पथ, विघ्न-बाधाओं से रहित रहता है। वे आसानी से जीवन-पथ को समाप्त करते हैं। जितना ही अच्छा जिनका संस्कार (भाग्य) रहता है, जीवन में उतनी ही उन्हें, सुविधाएँ भी मिलती हैं। जैसे सांस्कारिक परिवार में जन्म पाते हैं; अच्छी शिक्षा व भली संगति मिलती हैं; इत्यादि-इत्यादि।

भगवान् स्वयम् कुछ नहीं करते। वे किसी को भला या बुरा करने की प्रेरणा नहीं देते। तब उनकी नियति के नियम अटल हैं। जो जैसा करता है, वैसा फल वह अवश्य पाता है। जो जैसा बोता है, वह वैसा ही काटता है।

इस प्रकार से **मित्र** ! हर प्राणी चाहे तो, श्रेय-मार्ग पर चल कर, निर्वाण प्राप्त कर सकता है। आवश्यकता है लगन और पुरुषार्थ की।

पुरुषार्थ में अद्भुत शक्ति है। इससे सब कुछ साध्य है। मित्र ! पुरुषार्थ करें। भाग्य भरोसे न बैठे रहें ! कहा भी न है :—

दैव-दैव आलसी पुकारा।

अगले पत्र में हम लोग फिर मिलेंगे। तब तक के लिए बिदा लेता हूँ। सप्रेम प्रणाम !

दैव दैव आलसी पुकारा। आप का स्नेही मित्र,

'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय १ वल्ली ३

प्रिय मित्र, जमशेदपुर
५-१-६६
प्रणाम ! सवा चार बजे भोर

पिछले पत्र में अध्याय १ की दूसरी वल्ली की चर्चा हो चुकी है। आज वल्ली तीन की बारी है।

वल्ली तीन की वार्ता शुरू करने के पहले, आइए, हम लोग शरीर की बनावट का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त कर लें;

यह शरीर मिट्टी, पानी, अग्नि, आकाश और हवा से बना है। हवा, पानी और भोजन पर कायम रहता है।

माँ के पेट में ही, छठे महीने में हृदय की गति जो शुरू होती है, वह जीवन-काल तक चलती रहती है। रुकती है, तो बराबर के लिए रुक जाती है। हृदय की गति रुकना ही मृत्यु है।

पाँच कर्मेंद्रियाँ—हाथ, पाँव, वाणी गुदा व मूत्रेंद्रिय और ज्ञानेंद्रियाँ—कान, त्वचा, आँख जीभ और नाक, इस शरीर में हैं। शरीर के सारे व्यापार में ही कर्मेंद्रियाँ तथा ज्ञानेंद्रियाँ चलाती हैं। ये तब तक अपने-अपने काम करती रहती हैं जब-तक हृदय की गति चलती रहती है। हृदय की गति रुकने के साथ-साथ सभी इंद्रियाँ नाकाम हो जाती हैं। हृदय की धड़कन ही एक प्रकार से प्राण है। उसका रुकना ही प्राण का निकल जाना है।

शरीर में कोई भी घातक क्षति होने से, हृदय की गति कभी भी रुक जाती है। कुछ न होने पर भी एक-न-एक दिन इसे रुकना ही है।

आयुर्वेद के अनुसार शरीर के अन्दर नीचे लिखे पाँच वायु हैं—

प्राण—मूलाधार में रहने वाली वायु।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपान—गुदा मार्ग से बाहर निकलने वाली वायु ।
उदान—हृदय से कंठ-तालु तक संचरित होने वाली वायु ।
व्यान—सारे शरीर में व्याप्त रहने वाली वायु; और,
समान—नाभी में संचरित होने वाली वायु ।

मनोविज्ञान के अनुसार, बुद्धि, माँ-बाप, दादा-दादी अथवा नाना-नानी के अनुरूप मिलती हैं। इन छवों में किसी भी एक की तरह मिल जायेगी। और रंग तथा आकृति माँ-बाप की तरह ही होती हैं।

प्रिय मित्र ! अब शरीर की आध्यात्मिक व्याख्या पर आवें—

अध्यात्म-शास्त्र के अनुसार, जो कुछ दीखने व जानने में आता है, सब के सब, एक अलौकिक शक्ति के संकल्प मात्र से बनते व विनसते हैं। उसी शक्ति को लोग ईश्वर, परमात्मा आदि अनेक नामों से पुकारते हैं। वह शक्ति यानी परमात्मा सर्वत्र है और सब में व्याप्त है। जिस प्रकार सूर्य की किरणें सूर्य के ही अंश हैं, उसी प्रकार समस्त जीव ईश्वर के ही अंश हैं। भूत-मात्र के शरीर में ईश्वर अपने दो रूप में हैं—एक अपने अंश रूप में, दूसरे स्वयम् पूर्ण रूप में।

अगर शरीर की उपमा घर से दें तो अंश रूप में ईश्वर यानी आत्मा (जीव) उसमें घर के स्वामी के रूप में है। इंद्रियाँ उसके कार्यकर्त्ता हैं। शरीर के अन्दर पूर्णरूप से विराजमान ईश्वर सिर्फ द्रष्टा (देखने वाला) है। शरीर के व्यापारों से वह संबंध नहीं रखता। यों तो परमात्मा कण-कण में व्याप्त हैं, परन्तु साधनार्थ विद्वान् साधकों ने उनका निश्चित स्थान शरीर के अन्दर हृदय की गुफा माना है। यहीं ये विराजमान हैं। उनका अंश—आत्मा-भी वहीं रहती है।

ईश्वर अंश आत्मा ही बोलता जीव है। प्राणी के जीवन की अवधि निर्धारित रहती है। जीवन की अवधि तक बोलता जीव शरीर के अन्दर निवास करता है। खत्म होते ही शरीर के बाहर हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाता है। उसके बहराते ही, शरीर के सारे व्यापार रुक जाते हैं यानी वह मर जाता है।

आत्मा और परमात्मा दोनों दीखने में नहीं आते। कहा जाता है कि ये पवन रूप में रहते हैं। कहा भी है न—

नव द्वारे का पिंजरा, तामे पंक्षी पौन।
रहने को आश्चर्य है, गये अचम्भा कौन॥

कुल ८४ लाख योनियाँ हैं। जब-तक, जीव अपने शुभ-कर्मों के फलस्वरूप निर्वाण नहीं पा लेता, तब-तक जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रह, ८४ लाख योनियों में भ्रमता रहता है। निर्वाण पाकर जीव परमात्मा में मिल जाता है।

इन सारी बातों की प्रतीति, आत्म-विश्वास पर ही निर्भर करती है। **मित्र** ! नमक का पुतला अगर समुद्र थाहने जाय तो वह गल कर उसी में मिल जायेगा। समुद्र की गहराई के बारे में किसी को बताने नहीं आयेगा। यही हाल भगवत्-प्राप्त भक्तों का है। वे भगवान् के दर्शन कर, उन्हीं में मिल जाते हैं। भगवान् का अंश जीव भगवान् में मिल कर एक हो जाता है। वे किसी को बताने व परमात्मा के दर्शन कराने थोड़े आते हैं ! वे लौटते ही कहाँ ! !

अध्यात्म-शास्त्र के अनुसार जीव अपने कर्मों के फलरूपी संस्कार की गठरी को जन्म-जन्मान्तर तक ढोते फिरते हैं। उन्हें भुगतते रहते हैं। संस्कारों के अनुरूप ही वे भले-बुरे धनी-गरीबादि परिवारों में जन्मते हैं।

प्रिय मित्र ! मोटा-मोटी जीवन के आध्यात्मिक सिद्धान्तों की चर्चा भी हो चुकी। अब विषय प्रसंग पर आवें।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! जीव-मात्र के हृदय-आकाश में आत्मा और परमात्मा दोनों निवास करते हैं। परमात्मा सब प्रकार से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अलिप्त होकर रहता है; किन्तु आत्मा अच्छे कर्मों के फलों को भोगती है।

ब्रह्म को जानने वाले—ज्ञानी, नचिकेताग्नि को तीन बार सेवन करने वाले अर्थात् यज्ञ-दान-तपादि करने वाले निष्काम कर्म-योगी तथा पंचाग्नि के उपासक गृहस्थ भी जीवात्मा और परमात्मा का संबन्ध धूप और छाया की तरह बताते हैं। परमात्मा धूप है, तो जीवात्मा उसकी छाया है। जिस प्रकार छाया में अपनी कोई सत्ता नहीं रहती; वह धूप से ही प्रकाशादि प्राप्त करती है; यहाँ तक कि उसका अस्तित्व ही धूप पर निर्भर करता है; उसी प्रकार जीवात्मा की कोई अपनी सत्ता नहीं है। वह अल्प शक्ति और प्रकाश परमात्मा से ही प्राप्त करता है। तो भी जीव, भ्रमवश, अपने को शक्तिवान् समझ कर वृथाभिमान करता है।

क्रमशः धूप और छाया रूप होने के कारण परमात्मा और आत्मा का सम्बन्ध अटूट है। धूप गायब तो छाया भी।

प्रिय नचिकेता ! संसार-सागर को तरने के लिए नचिकेताग्नि का चयन सेतु (पुल) की तरह है। उसके सेवन से जीव जन्म-मरण को तर जाता है। ब्रह्म का ज्ञान भी मुक्तिदायक है तथा मोक्ष-प्राप्ति के लिए आवश्यक है। परमात्मा करें, हम दोनों को ये दोनों प्राप्त हो जायँ।

प्रिय मित्र ! नचिकेताग्नि चयन का विषय कर्म-योग का है और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ब्रह्म-ज्ञान का ज्ञान-योग का। दोनों—कर्म-योग और ज्ञान-योग मुक्ति-प्राप्ति के लिए आवश्यक हैं। इसलिए, मृत्यु देवता दोनों की प्राप्ति के लिए भगवान् से दुआ मनाते हैं।

मित्र ! कर्म-योग और ज्ञान-योग दो स्वतंत्र विषय हैं। इनकी चर्चा 'गीतामृत' में विस्तार में की गई है। विशेष जानकारी के लिए 'गीतामृत' देखें।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! ज्ञानी जन मानव-शरीर की उपमा रथ से देते हैं। वे कहते हैं—'जीव का शरीर रथ के समान है। इंद्रियाँ शरीर रूपी रथ को खींचने वाले घोड़े हैं। बुद्धि ही रथ को हाँकने वाला सारथी है ! मन ही इंद्रिय रूपी घोड़ों की लगाम है। इंद्रियों के विविध विषय ही उनके (घोड़ों के) बिचरने के मार्ग हैं। जीव (आत्मा) इस शरीर रूपी रथ में स्वामी के रूप में विराजमान है।'

मित्र ! रथ में बैठे मालिक के आदेशानुसार ही सारथी रथ को हाँकता है। मालिक जहाँ जाना चाहता है, सारथी वहीं रथ हाँक ले जाता है। यहाँ जीव का अंतिम मंजिल परमधाम है। अगर जीव बुद्धि को, रथ को परमधाम (ब्रह्म-भवन) की राह पर चलाने के लिए, उचित आदेश देता जाता है, बुद्धि अपने कार्य में कुशल व तत्पर है तथा इंद्रिय रूपी घोड़ों पर काबू रख, रथ को जीव के निर्देशानुसार हाँके ले जाती है, तो वह जीव निश्चय ही अंतिम मंजिल पर पहुँच कर जीवन-मुक्त हो जाता है।

जीवन में बुद्धि का महत्व बहुत ज्यादा है। बुद्धि का ठीक रहना-सात्विक और विवेकशील होना अत्यन्त आवश्यक है। जहाँ बुद्धि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भ्रष्ट हुई कि इंद्रियाँ मनमानी करने लगेंगी। भोगों में वेतरह लुत्फ़ लेने लगेंगी। फिर जीव का सर्वनाश ही समझिए।

आप स्वयम् भी सोचते जाँय! सिर्फ पढ़ते ही न चले जाँय। गुनते व जीवन में उतारते भी जाँय।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता! इंद्रियाँ बिगड़ैल घोड़े की तरह हैं। जब सारथी कार्य-कुशल नहीं रहता तब वे रथ को मनमाना खींच गढ़े में डाल देते हैं। अगर सारथी रूपी बुद्धि भी सात्विक और विचारशील नहीं है तो वह रथी रूपी जीव को परम-धाम न पहुँचा सकेगी। रास्ते में ही विषय-भोगों में फँसा देगी।

अगर बुद्धि सात्विक है, तो वह इंद्रियों पर नियन्त्रण रखेगी। उन्हें राह पर चलाएगी। सारथी के रूप में वह इंद्रिय-रूपी घोड़ों को सही रास्ते पर ले जाकर रथी-रूपी जीव को परम धाम पहुँचाएगी।

प्रिय नचिकेता! जिनकी बुद्धि सात्विक और विवेकी नहीं है तथा जो विचारवान् संयमी और पवित्र नहीं हैं; उन्हें, भगवत् की प्राप्ति नहीं होती। वे तो जन्म-मरण के चक्र में ही पड़े रहते हैं। लेकिन जो बुद्धिमा, विवेक-शील, संयमी और पवित्र हैं, वे अवश्य ही निर्वाण के भागी होते हैं। उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

जब सारथी रूपी बुद्धि विवेकशील रहती है, तब वह लगाम रूपी मन को अपने पकड़ में रखती है। फिर घोड़े रूपी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इंद्रियाँ पर वह काबू रखती है और वह रथी-रूपी जीव को परमधाम पहुँचाती है।

प्रिय मित्र ! धार्मिक जीवन बिताने के लिए शास्त्र बार-बार कह रहा है। इसी एक बात को अनेकों बार दुहरा रहा है। वह इसलिए कि हम लोगों के दिल में यह बैठ जाय कि बगैर धार्मिक जीवन के कुछ हासिल होने को नहीं। शास्त्र के इस उपदेश को जीवन में उतारने का अथक प्रयास करें।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! इंद्रियाँ से उनके विषय—जैसे कामिनी, लुभावनी वस्तुएँ, मधुर गाने, तामसी भोजनादि—ज्यादा बलवान है। ये इंद्रियों को अपनी ओर बलजोरी खींच लेते हैं। इंद्रियाँ पागल की नाईं उनकी ओर दौड़ पड़ती हैं। अतएव, इनसे बचने के लिए इन भोग सामग्रियों से दूर ही रहना उचित होगा तभी इनसे जान बच सकेगी।

मित्र ! इन भोग सामग्रियों को पास भी रखें और इनसे अछूता भी रहें—यह एक अनहोनी-सी बात है।

विषयों से भी मन ज्यादा बलवान है। अतएव मन से सावधान रहें। इसे विषयों में विचरने न दें। मन से भोग वस्तुओं के चिन्तन करते-करते उन भोगों में आशक्ति पैदा होती है। फिर प्राप्ति की लालसा होती है। प्राप्ति में विलम्ब होने अथवा रुकावट आने से क्षोभ होता है। क्षोभ से क्रोध होता है। क्रोध से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, जिससे जीव का नाश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता है। मन को वश में कर, विषयों से दूर रखने से प्राणी इंद्रियों और उनके विषयों से भी अपने को बचा लेता है।

बुद्धि मन से भी ज्यादा बलवान है। अतएव, बुद्धि को विवेकशील और सात्विक रख जीव मन पर नियन्त्रण रखे। सतत प्रयास द्वारा मन को निर्मल बनावे। इसे राग-द्वेषादि से रहित कर दे।

और बुद्धि से भी जो ज्यादा बलवान और महान् है, वह है—आत्मा यानी स्वयम् जीव। वही बुद्धि मन इंद्रियों आदि का स्वामी है। सभी उसकी आज्ञा मानने के लिए वाध्य हैं। कोई भी उसकी अवहेलना नहीं कर सकता। इसलिए, जीव को चाहिए कि वह अपनी महान् शक्ति को याद रख, बुद्धि मन, और इंद्रियों पर काबू रखे। उनसे परास्त न हो। उनके मालिक होकर, उनका गुलाम न बने।

प्रिय नचिकेता ! जीवात्मा से ज्यादा शक्तिशालिनो माया है। यह जीवात्मा के अधीन नहीं है। इससे बढ़कर सिर्फ एक परमेश्वर हैं। उनके बड़ा कोई नहीं है। उनसे परे भी कुछ नहीं है। उनकी प्राप्ति ही जीव के आवागमन की समाप्ति है। परमगति और परमधाम वही है।

प्रिय मित्र ! उपर्युक्त प्रकार से आत्मा यानी जीव और परमात्मा के बीच में माया का स्थान है। यही माया जीव को नचाये फिरती है। इसी के चलते, जीव ईश्वर के पास रहते हुए भी उनको पहचान नहीं पाता। वह माया के वश में होकर, भटकता फिरता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मित्र ! संत तुलसीदास ने अपने रामचरितमानस (तुलसीकृत रामायण) में माया, ईश्वर जीवादि का वर्णन बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है। उसकी चर्चा आप से किये बिना रहा नहीं जाता। सुन ही लीजिए :—

अयोध्या के राजा दशरथ जी के पुत्र रामचन्द्र जी, अपने पिता की आज्ञा से १४ वर्ष के लिए बन गये। उनके साथ उनकी धर्म-पत्नी सीताजी और छोटा भाई लक्ष्मण भी गये। बनवास काल में वे दण्डक वन में गये। वहाँ गोदावरी नदी के किनारे पञ्चवटी नामक स्थान में पर्णकुटी छाकर भाई और पत्नी के साथ रहने लगे। किसी तरह १४ वर्ष बिताने थे।

एक बार जब रामचन्द्र जी, अपनी पर्ण कुटी में सुख से बैठे थे, तब लक्ष्मण जी ने सरल भाव से पूछा :—

एक बार प्रभु सुख आसीना। लक्षिमन बचन कहे छल हीना।
मोहि समुझाई कहहु सोई देवा, सब तजि करौं चरण रति सेवा।
कहहु ग्यान विराग अरु माया। कहहु सो भगति करहु जेहिं दाया।

दो०—ईश्वर जीव भेद प्रभु, सकल कहौ समुझाइ।
जातें होई चरन रति, शोक मोह भ्रम जाइ॥

लक्ष्मण जी ने कहा—'हे प्रभु ! मुझे समझा कर वही बताइए, जिससे मैं सब कुछ छोड़कर निरंतर आप की सेवा में रत रहूँ। ज्ञान, वैराग्य और माया के बारे में मुझे बताइए। उस भक्ति को कहिए जिसके कारण आप दया करते हैं।

ईश्वर जीव का भेद भी समझाकर कहिए, जिससे आप के चरणों में मेरी प्रीति हो तथा मेरे शोक-मोह और भ्रम सब नष्ट हो जयँ।

तब श्री रामचन्द्र जी ने कहा—

थोरेहि मँह सब कहउँ बुझाई। सुनहु तात मति मन चित लाई।
मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई ॥
तेहिकर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। विद्या अपर अविद्या दोऊ ॥
एक दुष्ट अतिशय दुख रूपा। जा बस जीव परा भव कूपा ॥
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहि निज बल ताके ॥
दो०—माया ईस न आपु कहुँ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छ प्रद सर्व पर माया प्रेरक सीव ॥

× × ×

रामचन्द्र जी ने कहा—हे लक्ष्मण ! मैं संक्षेप में सब समझाकर कहता हूँ। तू मन लगा कर सुन।

मैं और मेरा, तू और तेरा—यही माया है। इसी ने समस्त प्राणियों को वशीभूत कर रखा है। इंद्रियों के सभी विषयों तथा जहाँ तक मन जाता है, सब के सब माया है।

माया के भी विद्या और अविद्या दो भेद हैं। अविद्या रूपी माया दोषयुक्त और दुःखदायिनी है। मैं, मेरा और तू, तेरा के फेरे में इसी के कारण जीव पड़ा रहता है जिसके चलते संसार रूपी कुएँ में पड़ा हुआ जन्म-मरण का दुःसह दुःख सहता रहता है।

विद्या-रूपी माया के वश में गुण हैं और यही (विद्या रूपी माया) संसार की रचना करती है। लेकिन इस माया को अपनी शक्ति नहीं है। वह परमात्मा की प्रेरणा और शक्ति से ही ऐसा करती है।

हे लक्ष्मण ! जो माया, ईश्वर और अपने आप को नहीं जानता वही जीव है। और जो जीवधारियों के कर्मानुसार बंधन और मोक्ष को देनेवाला है; सबसे परे है और माया का प्रेरक है, वही ईश्वर है।

काक-भुशुण्डि और गरुड़जी की वार्ता में तुलसीदास जी ने और भी कहा है—

ईश्वर अंस जीव अनिवासी। चेतन अमल सहज सुखरासी ॥
सो माया बस भयउ गोसाईं। बँध्यो कीर मरकट की नाईं ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जीव ईश्वर का ही अंश है। यह अविनाशी, चेतन, निर्मल और स्वभाव से ही सुख की राशि है। इस प्रकार का जीव माया के वशीभूत होकर तोते और बन्दर की नाईं अपने आप बँध गया।

प्रिय मित्र ! रामायण में संत तुलसीदास ने वेद-पुराण, उपनिषदादि के निचोड़ को कूट-कूट कर भर दिया है। सरल व सहज-भाव में सब कुछ रख दिया है। आप रामायण अवश्य पढ़ें। आप से मेरी यह आरजू है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! सबके हृदय में विराजमान परमात्मा, अपनी योग माया से ऐसे छिपे रहते हैं कि किसी को दिखलाई नहीं पड़ते। सूक्ष्म बुद्धि वाले ज्ञानी जन ही उनके अस्तित्व का अनुभव कर पाते हैं।

हे नचिकेता ! विचारवान् व्यक्ति को चाहिए कि वह वाणी आदि सभी इंद्रियों को वश में कर मन में विलीन कर दे। मन को भी वश में कर, मार्ग-दर्शक बुद्धि में विलीन कर दे, जिसमें वह पूर्णतया बुद्धि के अधीन में रहे। बुद्धि को भी आत्मा में विलीन कर, आत्म-दर्शन प्राप्त करे। आत्म-दर्शन से उसके अन्तर के भेद-भाव मिट जायेंगे। सभी एक-सा व भगवानमय प्रतीत होने लगेंगे। फिर वह अपने आपको परमात्मा में विलीन कर दे। अर्थात् इंद्रिय, मन और बुद्धि के संयम तथा आत्म-नियन्त्रण द्वारा जीव परमात्मा की प्राप्ति करे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हे मनुष्यो ! उठो ! मोह-निद्रा से जागो !! जाओ ज्ञानी गुरु के पास और सीखो आत्मतत्व के विषय को !!! आत्मतत्व की प्राप्ति का मार्ग छूरे की तेज धार की तरह दुष्कर है। इसे जानो ज्ञानियों से।

प्रिय मित्र ! यहाँ ग्रंथकर्त्ता लोगों की भलाई के लिए चिल्लाकर और उन्हें ललकार कर कह रहा है—"मनुष्यो ! क्यों अविद्या और आलस-वश अपने अनमोल मानव-जीवन को व्यर्थ बिता रहे हो ? जीवन की अवधि जो बीत चुकी अब वापस आने को नहीं। जो बाकी बची है उससे लाभ उठाओ। जीवन का मुख्य उद्देश्य भगवत् की प्राप्ति है, जिसके लिए आत्मतत्व का ज्ञान जरूरी है। आत्मतत्व प्राप्ति का मार्ग अत्यन्त बीहड़ है। इसलिए, पहले ज्ञानी गुरु के पास जाओ और आत्मतत्व के गूढ़ विषय को उनसे समझो ! तुम्हारा कल्याण इसी में है !"

मित्र ! सत्-पथ पर चलना छूरे की तेज धार पर चलने के समान है। अनेक कठिनाइयाँ, विघ्न बाधाएँ आती हैं। गुमराह करने के लिए, अनेक प्रलोभन मिलते हैं। दूसरे असत्-पथ के गामी लोग अकारण खिलाफ हो मुसीबत के पहाड़ ढाहने लगते हैं। इसीलिए, अधिकतर, महापुरुषों को अपनी जिंदगी की भी कुरबानी करनी पड़ती है। ईसामसीह, सुकरात आदि को धर्म-मार्ग पर चलने के कारण ही जान गंवानी पड़ी। अनेक कष्ट उठाने पड़े। यह बात दूसरी है कि उन्हें ये कष्ट नहीं व्यापे। वे हँसते ही रहे।

मित्र ! अध्यात्म-ज्ञान के लिए गुरु की आवश्यकता प्रतीत होती है। गुरु के पास जाने को कहा भी गया है। आखिर, किसके पास जाया जाय ! मैं तो आप ही को गुरु मान चुका हूँ। आगे भगवान् की मरजी। आपने भी तो किसी को गुरु माना ही होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जो परमात्मा, वाणी और स्पर्श से परे है; जो नित्य (सदा रहने वाला) अनादि, असीम, निराकार तथा अविनाशी है और जो नीरस व गंध रहित है, उसे जान कर मनुष्य मृत्यु के मुख से सदा के लिए छूट जाता है।

इस अध्याय में यमराज ने नचिकेता को जो उपदेश दिया है, वह परम्परागत सनातन उपाख्यान है। बुद्धिमान् जन इसे कहकर और सुनकर देवलोक के भागी बनेंगे।

जो कोई विशुद्ध होकर, प्रेमपूर्वक इस गूढ़ आत्मतत्व के प्रसंग को ब्राह्मणों की सभा में अथवा श्राद्ध क्रिया में सुनाएगा, उसका वह—सुनाने का कर्म—अनंतफल दायक होगा।

प्रिय मित्र ! अध्याय १ की चर्चा समाप्त हुई। उपर्युक्त दो खण्ड ग्रंथ-कर्त्ता द्वारा ग्रंथ की महिमा बताने के लिए कहे गये प्रतीत होते हैं।

इंद्रियों की उपमा चँचल घोड़ों से दी गई है। वास्तव में इंद्रियाँ मुश्किल से वश में रहने वाली हैं। जिस प्रकार से बिगड़ैल घोड़ों को काबू में रखने के लिए चतुर घुड़सवार उन्हें कटीली लगाम देते हैं और उन पर सवारी सावधानी से करते हैं; उसी प्रकार इन इंद्रियों को वश में रखने के लिए उन पर निरंतर नियंत्रण रखें वरना हमें ये बन्दर की नाई नचाएँगी। इनकी महिमा अपार है। इनसे विरले ही पार पाते हैं। इनसे। इनसे बचने के लिए भगवत् कृपा की आवश्यकता होती है।

इस अध्याय में वर्णित बातों को आप बार-बार पढ़ें। चिन्तन और मनन करें। अध्यात्मिक दुनियाँ निराली होती है। इस में भ्रमण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करने वाले भी निराले होते हैं। शुरू में सब कुछ काल्पनिक ही प्रतीत होता है। आत्मबोध के बाद ही सबका यथार्थ रूप दीख पड़ता है। साधना की अवस्था में दृढ़ विश्वास अत्यन्त आवश्यक है। शास्त्र और गुरु की बातों पर पूर्ण विश्वास कर ही आगे बढ़ना होता है। हम लोग आगे बढ़ते जायँ। भगवत् कृपा से आत्मबोध हो ही जाएगा। इस जन्म में न सही, दूसरे ही जन्म में मोक्ष मिलेगा ही।

कठोपनिषद् के उपदेशों को जीवन में उतारने के उद्देश्य से ही हम लोगों ने पठन-पाठन शुरू किया है। अन्तःकरण को निर्मल बनाने का व्रत हम लोगों ने शुरू में ही लिया है। अतएव, पढ़ने के साथ-साथ इसके उपदेशों को आचरण में लाते भी चलें। तभी कुछ लाभ होगा। कोरे पढ़ते जाने से **मित्र** ! खास कुछ लाभ न होगा।

अगले पत्र में फिर मिलेंगे। तब तक के लिए बिदा लेता हूँ। पत्र को भी लोग आधी भेंट मानते हैं। मैं तो पूरी ही मानता हूँ। लिखते समय मुझ को ऐसा लगता है कि मैं लिखता क्या जा रहा हूँ—आप के समीप बैठकर सुनाता ही जा रहा हूँ। सप्रेम प्रणाम !

आपका स्नेही मीत
'गणेश'

२०६६/०४/६

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय २ : वल्ली १

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

प्रणाम ! ११-१-६६

अध्याय १ की चर्चा हो चुकी है आज अध्याय दो की पहली वल्ली की वार्ता शुरू की जाती है।

गत वल्ली में कहा गया है कि परमात्मा प्राणियों के हृदय में रहते हुए भी सबको दीखते नहीं। वे क्यों नहीं दिखलाई पड़ते ? इसका कारण मृत्यु देवता, नचिकेता को यहाँ बताते हैं।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! कान, त्वचा, आँख, जीभ और नाक-पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ क्रमशः शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध की जानकारी जीव को कराने के लिए बनाई गई हैं। इंद्रियों के स्थूल विषय जीव के शरीर के बाहर में ही हैं। इसलिए सृष्टि-कर्त्ता ने इंद्रियों के मुख को बाहर की ओर रखा है। फलतः ये स्वभावतः बाहर की भोग-वस्तुओं के पीछे दौड़ती हैं। उन्हीं में बराबर रचे-पचे रहती हैं। शरीर के अन्दर मौजूद परमात्मा को देखने की इनकी प्रवृत्ति ही नहीं होती।

विरले ही कोई बुद्धिमान् जन, अमर होने की इच्छा से, इंद्रियों को बाहर के विषयों से मोड़ते हैं और अन्तरात्मा को देखने में लगाते हैं। वे आत्म दर्शन प्राप्त कर, जीवन मुक्त हो अमर हो जाते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! जैसे जल की धारा, नीचे की ओर आप से आप जाती है, वैसे ही इंद्रियाँ बाहर के विषयों की ओर स्वतः दौड़ती हैं। इनकी उत्पत्ति ही इस तरह की है कि अनायास इन्हें बाहरी विषयों के पीछे जाना पड़ता है।

पानी की तीव्रधारा को रोकने और विपरीत दिशा में बहाने में बड़ी कठिनाई होती है। मजबूत बाँध बनाने पड़ते हैं। उनकी बराबर निगरानी करनी पड़ती है। पानी की धारा बाँध को तोड़ कर, छेद कर तथा बाँध के ऊपर व बगल से होकर नीचे की ओर जाने का निरंतर प्रयास करती रहती है। उसी प्रकार इंद्रियाँ जीव के संयम रूपी बाँध को तोड़ कर विषयों के पीछे दौड़ने का बराबर प्रयत्न करती हैं। इसीलिए देखा जाता है कि कितने ही संयमी व विवेकी जीव को ये एक-न-एक दिन पछाड़ देती हैं। जैसे-जैसे देह बूढ़ी हो थकती जाती है, इंद्रियों की तृष्णाएँ बलवती होती जाती हैं। यही कारण है कि बहुत दिनों का संयमी प्राणी भी ढलती उम्र और बुढ़ापे में इंद्रियों का शिकार बन जाते हैं। संयम की बाँध टूट जाती हैं और वे भोगों के भोगने में लग जाते हैं।

मित्र ! फिर क्या किया जाय ? इंद्रियों को बाहर के विषयों से रोककर, अन्तरात्मा की ओर किस प्रकार ले जाया जाय ? इंद्रियों को विषयों से हटाने के सिर्फ एक ही साधन हैं—वह है—भगवान् के शरणागत् हो, इंद्रिय-दमन रूपी मार्ग पर निरंतर आरूढ़ रहना। एक बारगी पूर्ण सफलता न भी मिल सकती है। इससे जी तोड़ कर बैठ न जायँ। असफलताओं पर पैर रखते, आगे बढ़ते जायँ।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! मूर्ख लोग अज्ञानवश भोगों के भोगने में ही लगे रहते हैं। उन्हें भगवत्-भक्ति नहीं सूझती। इससे वे जन्म-मरण के चक्र में ही पड़े रहते हैं। परन्तु बुद्धिमान् लोग

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बूझते हैं कि जीवन का उद्देश्य भोगों को भोगना नहीं, बल्कि मोक्ष की प्राप्ति है। इसलिए वे इनमें लिप्त नहीं होते। वे अमर-पद की प्राप्ति के ही लिए प्रयास करते हैं।

प्रिय नचिकेता ! शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध तथा स्त्री-सहवास से सुख का बोध जीव को इंद्रियाँ कराती हैं; लेकिन इन इंद्रियों को अपनी शक्ति नहीं है। इनका अनुभव कर, जीव को बताने का काम, वे एक अदृश्य शक्ति के बल पर ही करती हैं। उस अपूर्व शक्ति के सहारा बिना ये इंद्रियाँ बेकार हैं। मरे जीव के आँख, कानादि इंद्रियाँ रहती हुई भी देख, सुन नहीं सकतीं। कारण अदृश्य शक्ति का सहारा उन्हें प्राप्त नहीं रह जाता। वह शक्ति सब-कुछ जानती रहती है। उससे अन-जान कुछ नहीं रहता। वह अदृश्य शक्ति ही आत्मा है, जिसे तू **नचिकेता** ! जानना चाहता है।

प्रिय नचिकेता ! स्वप्न में तथा जागने में देखे गए वस्तुओं का बोध भी वह अदृश्य शक्ति यानी आत्मा ही जीव को कराती है। उस अमर और सर्व व्यापी आत्मा को जानकर ज्ञानी जन शोक से मुक्त हो जाते हैं।

प्रिय नचिकेता ! समस्त जीवधारियों के जीव (प्राण) रूप में आत्मा ही है। कर्म-फल को भोगने वाली वही है। भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान तीनों कालों पर उसी का आधिपत्य है। उस सर्वशक्तिमान् आत्मा की अवहेलना कोई नहीं कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सकता। जो इस आत्मा को इस प्रकार जान जाता है, वह अभय हो जाता है। वह इस आत्मा को सदा सुरक्षित जानकर इसकी रक्षा की चिन्ता नहीं करता। **नचिकेता** ! आत्मतत्व के रूप में तू इसी आत्मा को जानना चाहता है। लो, इसे जान लो।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा सबसे पहले की है। पाँचों तत्व—पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु—उसके बाद ही बने हैं। अपने संकल्प रूप तप से स्वयम् प्रकट होकर वह सब जीवों के हृदय में एक रूप से वास करती है। एक ही आत्मा सबके हृदय में एक-सी विराजमान है—जिसे ऐसा प्रतीत हो जाता है वही आत्मा को भली-भाँति जानता है। यही आत्मा ही वह जीव (ब्रह्म) है, जिसके बारे में तू जानना चाहता है। आत्मा को उपर्युक्त प्रकार से जानना ही आत्म-ज्ञान है।

प्रिय नचिकेता ! सारी सृष्टि को अपने अन्दर में धारण कर, आत्मा अपने संकल्प-मात्र से, आपसे आप बन जाती है। न उसे कोई बनाता है न वही किसी को बनाती है। सृष्टि भी उसके संकल्प-मात्र से ही बन जाती है। फिर वह सब प्राणियों के हृदय में प्रवेश कर, निरंतर विराजमान रहती है। जिसे तू जानना चाहता है वह यही आत्मा है।

प्रिय नचिकेता ! यज्ञ में जिज्ञासु भक्त दो लकड़ियों को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रगड़ कर, उनमें छिपी अग्नि को बाहर करते हैं। फिर जिस प्रकार गर्भिणी स्त्री गर्भ को सुरक्षित रखती है, वे भी उन दो लकड़ियों से बाहर की गई अग्नि को संजोकर रखते हैं। वे उस अग्नि की पूजा होमादि से करते हैं। वह अग्नि भी ब्रह्म रूप ही है। ज्ञानी-जन इसी की पूजा ध्यान योग से करते हैं। अर्थात् अग्नि में अपनी कोई सत्ता नहीं है। उसमें भी शक्ति-रूप में ब्रह्म ही व्याप्त हैं। अग्नि में स्थित ब्रह्म ही वह जीवात्मा है—जिसके विषय में तू जानना चाहता है।

प्रिय नचिकेता ! जिस अदृश्य शक्ति के अन्तर्गत सूर्य उगते और डूबते भी हैं; जिसमें सारे देवतागण समाये हुए हैं; सभी जिसके वश में हैं तथा जिसकी अवहेलना कोई नहीं कर सकता, वह शक्ति ही ब्रह्म है और वह ब्रह्म ही बोलता जीव यानी जीवात्मा है।

प्रिय नचिकेता ! एक ही ब्रह्म, यहाँ-वहाँ, लोक में परलोक में—सब ठौर हैं। वही ब्रह्म सब जीवों में प्राणरूप में विराजमान हैं। अज्ञानवश, जो लोग इस प्राणरूप आत्मा को भिन्न-भिन्न वस्तुओं व जीवों में पृथक-पृथक रूपों में देखते हैं, वे जन्म-मरण के फेरे में ही पड़े रहते हैं।

प्रिय मित्र ! सभी जीवों में एक ही आत्मा है; इस नाते सभी एक हैं। अज्ञानवश, हम लोग अपने को शरीर समझ कर पृथक्-पृथक् मानते हैं। किसी से प्रेम करते हैं, तो किसी से द्वेष और किसी से घृणा करते हैं। इस भ्रम को दूर करने के लिए, सब से पहले, हम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लोगों को भली-भाँति समझ कर दिल में बैठाना होगा कि हम लोग शरीर नहीं आत्मा हैं। शरीर तो आत्मा का चन्दरोज का निवास स्थान है। आत्मा सदा रहने वाली है तो शरीर निश्चय ही नाश होने वाला है। फिर हमें साधना द्वारा जानना व दिल में उतारना होगा कि एक ही ब्रह्म आत्मा रूप में भूतमात्र में विराजमान हैं।

साधना करते-करते एक ही आत्मा समान रूप से सब में दीखने लगेगी। फिर, सारा विश्व ही अपना प्रतीत होने लगेगा। पराया कोई न रहेगा। राग-द्वेष-घृणादि सभी मिट जायेंगे। हृदय की उलझन सुलझ जाएगी। फलतः प्रेम की निर्मल धारा बह निकलेगी। फिर तो आनन्द ही आनन्द रहेगा।

आप साधना करें। चित्त को निर्मल करने का प्रयास करें। एक-न-एक दिन हृदय की अज्ञान रूपी गाँठ अवश्य खुलेगी। भगवान् स्वयम् एक रूप सब में दीखने लगेंगे। लेकिन मित्र! भगवान् को, कोई आप को दिखा नहीं सकेगा। सिर्फ पाने का रास्ता भर बता देगा। प्राप्त तो आप को अपने प्रयास से करना होगा।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता! सदा एक-सी और एक रूप से सब में रहने वाली आत्मा की जानकारी पवित्र मन से हो पाती है। जानकारी के बाद तो, सभी प्रकार के भेद-भाव मिट जाते हैं। तब तो सारा विश्व उसी का स्वरूप प्रतीत होने लगता है। परन्तु, जिसे इस आत्मा का बोध नहीं होता, उसे यह जगत् परमात्मामय नहीं दीखता। उसे एक ही आत्मा का आभास सब में नहीं मिलता। उसे भ्रमवश विपरीत दीखता है। ऐसे लोग मृत्यु के ही फेरे में पड़े रहते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हे नचिकेता ! आत्मा का आकार जीवधारी के हृदय के अनुपात से अँगूठे के बराबर है। वह जीवमात्र के हृदय में विराजती है। भूत, वर्त्तमान् और भविष्यत् तीनों पर एकमात्र इसी का आधिपत्य है। जीव यही आत्मा है। वह शरीर कदापि नहीं है। इस आत्मा का भान हो जाने पर जीव शरीर की रक्षा की चिंता नहीं करता। यही आत्मा वह जीव है जिसके बारे में तू जानना चाहता है।

मित्र ! वास्तव में आत्मा तो अशरीरी है और सर्वत्र है। योगी लोग ध्यानादि के लिए हृदय के आकार के अनुपात से आत्मा को अंगूठे के बराबर और हृदय कमल को उसका विशेष निवास-स्थान मानते हैं। एक प्रकार से ये कल्पित बातें हैं। इनका अक्षरशः माने लेने की आवश्यकता नहीं है।

यमराज आगे बोले :—

प्रिय नचिकेता ! अँगूठे के बराबर आकार वाली आत्मा बिना धुएँ की ज्योति की तरह है यानी बिलकुल विशुद्ध है। भूत, वर्तमान और भविष्यत् तीनों कालों का मालिक वही है। वह सदा रहने वाली है। वह कल भी थी, आज भी है और कल भी रहेगी। यही वह आत्मतत्व है, जिसे तू जानना चाहता है।

हे नचिकेता ! जिस प्रकार पहाड़ की ऊबड़-खाबड़ चोटी पर वर्षा हुआ जल, चारों तरफ से बहता हुआ नीचे पहाड़ी के भागों में फैलकर तितर-बितर हो नष्ट हो जाता है और वह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धारा रूप में बह कर महासागर में मिल नहीं पाता है; उसी प्रकार आत्मा को प्रत्येक जीवधारी के शरीर में अलग-अलग देखने वाला मनुष्य, परमात्मा को प्राप्त कर उनमें मिलकर एक नहीं हो पाता है। वह तो भिन्न-भिन्न योगियों में भ्रमता ही रहता है। अर्थात् मनुष्य, पशु-पक्षी कीट-पतंगादि ८४ लाख योनियों में जन्मता और मरता रहता है।

प्रिय नचिकेता ! जो सभी जीवों में एक ही आत्मा को विराजमान देखते हैं; जिन्हें सारा विश्व परमात्मामय ही दीखता है, ऐसे मननशील ज्ञानी जनों की आत्माएँ ब्रह्म में मिलकर वैसे ही ब्रह्म रूप हो जाती हैं; जैसे निर्मल जल में निर्मल जल ढालने से दोनों मिलकर एक हो जाते हैं—दोनों एक रंग और एक रस के हो जाते हैं।

प्रिय मित्र ! अध्याय दो की पहली वल्ली की चर्चा समाप्त हुई।

सभी जीवों में एक ही आत्मा विराजती है—का आभास ही साधना की चर्म सीमा है। परमधाम (ब्रह्म-भवन) जाने की अंतिम सीढ़ी यही है। अतएव, एकत्व आत्मा का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करें।

मित्र ! एकत्व आत्मा का ज्ञान अनुभव की चीज़ है। सच पूछिए, तो आत्मा के अस्तित्व को भी अनुभव ही किया जा सकता है। आत्मा देखी जाने वाली वस्तु नहीं है। यह तो एक तरह की आत्मा या कहिए पवन है—वह भी ऐसी जो अगोचर है। अदृश्य है।

सप्रेम प्रणाम !

आपका प्रिय मीत

'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय २ : वल्ली २

प्रिय मित्र,

जमशेदपुर
१५-१-६६
साढ़े आठ बजे रात

प्रणाम !

पिछले पत्र में अध्याय २ की पहली वल्ली की चर्चा हो चुकी है। आज वल्ली दो की वार्ता शुरू की जाती है।

यमराज बोले—

प्रिय नचिकेता ! यह शरीर नगर की तरह है। दो आँखें, नाक के दो छिद्र, एक मुँह, मल-मूत्र विसर्जन के रास्ते, नाभि तथा ब्रह्म-रन्ध्र (सिर में रहने वाला) इसके ग्यारह दरवाजे हैं। इसमें आत्मा निवास करती है। वही इस नगर का राजा है। इंद्रियाँ इसके कार्य-कर्त्ता हैं; जो नगर रूपी शरीर के सारे व्यापार चलाती हैं। इस नगर रूपी शरीर में रहने वाली आत्मा ही ब्रह्म है। जो इस आत्मा का ध्यान करते हैं, वे जीवन-काल में ही जीवन-मुक्त हो जाते हैं। वे कभी भी शोक नहीं करते। वे मरकर परमधाम को जाते हैं। उन्हें निर्वाण मिल जाता है।

आत्मा सब जगह और सब में है। यही वस्तु के रूप में अन्तरिक्ष में बसती है। घरों में अतिथि होकर जाती है। यज्ञ की वेदी पर अग्नि रूप में पूजित होती है। मनुष्यों और देवताओं में आत्मा के रूप में विराजती है। आकाश में भ्रमण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करती है। यही जलों में मछली, शंख, सीपी आदि और पृथ्वी में पेड़, पौधे अन्नादि तथा पहाड़ों में नदी, नालादि के रूप में प्रकट होती है। यह आत्मा सब प्रकार से महान् है।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा शरीर के मध्य-हृदय में रहती हुई, प्राण वायु को ऊपर ले जाती है और अपान वायु को बाहर करती है। अर्थात् हृदय में स्वामी के रूप में रहती हुई, शरीर के सारे व्यापारों को चलाती है। सभी देवता-गण इस आत्मा का गुण-गान करते हैं।

प्रिय नचिकेता ! सिर्फ एक आत्मा के निकल जाने से शरीर नाकाम हो जाता है। सभी इंद्रियाँ बेकाम हो जाती हैं। कुछ बचा नहीं रहता। यही वह आत्मा है, जिसके विषय में तू जानना चाहता है।

प्रिय नचिकेता ! कोई भी जीव प्राण और अपान वायु से जीवित नहीं रहता है। इन दोनों की अपनी कोई शक्ति नहीं है। ये उस आत्मा से ही बल प्राप्त करती हैं। जीव को जीवित रखने वाली वास्तव में आत्मा ही है।

हे नचिकेता ! मरने के बाद जीव की क्या गति होती है ?—रहती है या नहीं रहती है—मैं तुझे पुनः बतलाऊँगा। जीवात्मा के स्वरूप का भी वर्णन करूँगा। तू ध्यान से सुनना।

मरने के बाद, शुभ-अशुभ जिसका जैसा कर्म रहता है,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसके तथा शास्त्रादि के पढ़ने, सुनने सत् संगति आदि के करने से अन्तःकरण में जैसा भाव उत्पन्न हुआ रहता है, उसके अनुसार जीव वीर्य रूप में गर्भाशय में जाता है और फिर जन्मता है। अथवा वृक्ष, लता पर्वतादि ही होता है।

प्रिय मित्र ! जिस प्राणी की साधना पूरी हुई रहती है; वह तो मर कर सीधा परम-धाम (ब्रह्म-भवन) जाता है। वहाँ ब्रह्म में मिल कर, ब्रह्म रूप हो जाता है। यानी ईश्वर का अंश-जीव-ईश्वर में मिलकर एक हो जाता है।

जिसकी साधना अधूरी रह जाती है, वह या तो मर कर स्वर्ग को जाता है; वहाँ अपनी पुण्य-कमाई की लागत-भर स्वर्ग सुख भोगकर पुनः जन्म लेता है या मर कर शुद्ध आचरण वाले पुण्यवान परिवार में जन्म पाता है। नये जीवन में इन दोनों प्रकार के प्राणियों को उनके पूर्व जन्म के अच्छे संस्कार उदय होते हैं और वे साधना-पथ पर चल पड़ते हैं। इस प्रकार से वे जन्म जन्मातर के प्रयास से मुक्ति पा जाते हैं।

जिनकी पुण्य-कमाई कम रहती है यानी संस्कार मध्यम रहता है वे मनुष्य योनि में ही साधारण परिवारों में जन्म लेते हैं। लेकिन, जिनकी पाप-गठरी भारी होती है, वे पशु, पक्षी, कीट, पतंग, पिल्लू इत्यादि योनियों में जन्मते हैं अथवा पेड़-पौधे नदी पहाड़ ही बनते हैं।

मित्र ! मोटा-मोटी यही जन्म-मरण का क्रम है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जीवधारी के सो जाने पर भी उसकी पवित्र आत्मा इच्छित पदार्थों की रचना करती रहती है। वह आत्मा ही ब्रह्म है। वही अमृत कहलाती है। वही सर्वोपरि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। उसकी उपेक्षा कोई नहीं कर सकता। उसका प्रभुत्व सबके ऊपर छाया हुआ है। निश्चय ही यही वह बोलता जीव हैं, जिसके बारे में तू जानना चाहता है।

मित्र मित्र ! प्राणी के सो जाने पर, उसकी सभी इंद्रियाँ काम करना बन्द कर देती हैं। सब के सब, विश्राम करने लगती हैं। इससे, वह सो जाने पर, न देख सकता है, न सुन सकता है, न स्पर्श कर सकता है, न कुछ सोच व स्मरणादि ही कर सकता है। लेकिन आत्मा उस समय भी जागती रहती है। मैं सोया था—इसका भान भी वही कराती है। कहीं वह सो जाय, तब तो कुछ मालूम ही न हो।

यमराज आगे बोले—

हे नचिकेता ! एक ही अग्नि संसार के समस्त वस्तुओं में निराकार रूप में व्याप्त है; लेकिन जब वह प्रकट होती है, तब पृथक्-पृथक् वस्तुओं में उनके अनुरूप ही पृथक्-पृथक् दीखती है। इसी तरह सभी जीवों में एक ही आत्मा है; किंतु वह भिन्न-भिन्न जीवों में उनके अनुरूप भिन्न-भिन्न प्रतीत होती है। यह आत्मा ब्रह्म रूप में जीवों के भीतर और बाहर सर्वत्र है।

प्रिय नचिकेता ! सारे ब्रह्माण्ड में एक ही वायु फैली हुई है, लेकिन वह बाहरी वस्तुओं के संसर्ग में आने से उनके अनुरूप, भिन्न-भिन्न कहीं गरम कहीं शीतल, इत्यादि-इत्यादि, प्रतीत होती है। यह आत्मा भी सभी जीवों में स्वयम् एक होती हुई भी भिन्न-भिन्न जीवों में भिन्न-भिन्न-सी प्रतीत होती है। यह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आत्मा—जैसा कि ऊपर कहा गया है, जीवों के भीतर और बाहर सर्वत्र है।

प्रिय नचिकेता ! एक सूर्य, सारे संसार को प्रकाश देता है। भले-बुरे, पवित्र-अपवित्र, सभी प्रकार की वस्तुओं व दृश्यों को देखता व उनके संसर्ग में आता है; लेकिन देखने और संसर्ग में आने का असर सूर्य पर नहीं पड़ता। वह निर्लिप्त रहता है। उसी प्रकार हर जीवों में विराजती हुई आत्मा उन जीवों के सांसरिक दुःखों तथा प्रपंचों से बिलकुल अलग-अलिप्त रहती है। वह सब जीवों के हृदय में बसती हुई भी, एक प्रकार से सबसे विलग ही रहती है।

एक ही आत्मा सब का मालिक और तथा सर्वोच्च शासक है। वह जीवमात्र के हृदय में एक-सी बास करती है। फिर, भी भिन्न-भिन्न जीवों में वह अपने को भिन्न-भिन्न-सी बना लेती है। ऐसी आत्मा को जो विवेकी प्राणी अपने शरीर के अन्दर ही निरंतर विराजमान अनुभव करते हैं वे ही कभी नाश न होने वाला अक्षय सुख पाते हैं। दूसरों को यह अक्षय सुख नसीब नहीं होता।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा समस्त जीवधारियों में है। निर्जीव पदार्थों में भी है। वह सारे विश्व में व्याप्त है। ये सभी नश्वर हैं, किंतु आत्मा खुद अविनाशी है। इस प्रकार से वह नाशवानों में अविनाशी रूप में है। ब्रह्मादि देवों की भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आत्मा वही है। वह सर्व-शक्तिमान है। वह अकेली ही सबके कर्म-फलों को देने वाली है। उसके विधान ऐसे अटल तथा सुव्यवस्थित हैं कि जीव अपने अच्छे-बुरे कर्म-फलों को नियमित रूप से पाते रहते हैं। ऐसी आत्मा को जो अपने शरीर के भीतर ही अनुभव करते हैं, वे चिर शांति पाते हैं। वह शांति दूसरों को नहीं मिलती।

हे नचिकेता ! उपर्युक्त चिर-शांति और अक्षय-सुख अपने शरीर के भीतर वर्त्तमान आत्मा की जानकारी हो जाने पर ही मिलते हैं। अन्यथा नहीं। फिर वह आत्मा कैसे जानी जाय ? क्या वह स्वयम् प्रकट होती है ? या अनुभव से जानी जाती है ?

प्रिय मित्र ! कोई-कोई टीकाकार कहते हैं कि उपर्युक्त प्रश्न—'आत्मा कैसे जानी जाती है, तथा क्या वह स्वयम् प्रकट होती है ?' नचिकेता के द्वारा किए गए थे। दूसरे कहते है कि विषय को स्पष्ट करने के लिए, यमराज द्वारा ही उठाए गये थे। परन्तु प्रश्न चाहे जिसकी ओर से उठाए गये हों, कुछ फर्क नहीं पड़ता।

यमराज आगे बोले—

हे नचिकेता ! वह आत्मा स्वयम् प्रकाश-पुंज है। वह स्वयम् प्रकाशित होती है। सूर्य, चन्द्र तारागण, बिजली तथा अग्नि उसे नहीं प्रकाशित करते, बल्कि ये सभी उस आत्मा के प्रकाश से ही प्रकाशित होते हैं। उनमें अपनी रोशनी नहीं है। आत्मा ही उन्हें शक्ति रूप में रोशनी देती है। सारा विश्व ही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसके ही प्रकाश से प्रकाशित है।

प्रिय मित्र ! वल्ली दो की चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में तीन की चर्चा की जाएगी।

मित्र ! चतुर किसान बीज बोने के पहले, जोत-कोड़ कर, व घास पात निकाल कर, खेत तैयार करते हैं। फिर बीज बोते हैं। तब बीज अच्छी तरह अंकुरित होता है। जब-तक खेती पककर, कट नहीं जाती, वे देख-भाल करते हैं। घासों को चुन-चुन कर, निकालते जाते हैं। आवश्यकतानुसार पानी से सींचते हैं। तब अच्छी उपज होती है। आलसी व लापरवाह किसानों की खेती तो बिगड़ जाती है। उनके खेतों में जंगली घासों की ही भरमार हो जाती है।

मित्र ! हम लोगों का अन्तःकरण खेत के समान है। ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, मद, लोभ वगैरह जंगली घास की तरह हैं। हृदय-मंथन ही खेत-रूपी अन्तःकरण के जोत-कोड़ हैं। अध्यात्म-ज्ञान ही बीज है। भक्ति ही जल है। हृदय को मंथन कर ईर्ष्या-द्वेष, काम-क्रोध, मद-लोभादि को निकाले बिना गूढ़ अध्यात्म-ज्ञान का बोध नहीं होगा। सभी प्रकार के उपदेश ऊसर में बोये वीज की तरह नष्ट हो जायँगे। उपज रूपी ज्ञान नहीं हो पाएगा।

अतएव, पठन-पाठन के साथ-साथ आप हृदय मंथन कर अपने अन्दर के विकारों—ईर्ष्या, द्वेष, कामादि—को निकालते जायँ। अन्तःकरण को निर्मल बनाने का प्रयत्न जारी रखें। एक बार दूर किये—ये दूर नहीं होते। बार-बार आते रहते हैं। इसलिए, सदा प्रयत्नशील रहें। श्रद्धा-भक्ति रूपी जल से अपने अन्तःकरण को निरंतर तर रखें।

अच्छा होगा कि रात को सोते समय सारे दिन किये कामों पर विचार करें। सोचें—आप से किसी का जी तो नहीं दुखा ! आप ने किसी की निंदा-शिकायत तो न की !! बुरे विचार तो नहीं उठे !!!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इत्यादि, इत्यादि। आप से इस प्रकार के जितने दोष हुए हों, उन्हें आप अपनी गुप्त रोजनामचा में अंकित करें। भगवान् से प्रार्थना करें कि इन दोषों से बचने के लिए, वे आप में आत्मबल दें। और आप उनसे निवृत्त होने के लिए दृढ़-संकल्प हों। देखिएगा, धीरे-धीरे अपूर्व सफलता मिलेगी। इस प्रकार की मेरी डायरी मित्र के नाते आप ने देखी है। मुझे तो बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

प्रिय मित्र ! आप भी आजमा कर देखिए। कुछ नहीं तो, मेरी आरजू पर, कम से कम, मेरी खातिर ही गुप्त निजी डायरी रखिए। नियमित रूप से लिखिए।

लिखने में कुछ छिपाइएगा नहीं। दिन भर के कुकर्मों व कुविचारों को याद कर अवश्य लिख डालिएगा। देखिएगा, कुछ दिनों के बाद कुछ लिखने को नहीं रह जाएगा यानी आप का हृदय निर्मल हो जायेगा। परन्तु जल्द ही लापरवाह न हो जाइएगा। आराम हो जाने पर भी रोगी को चन्द दिनों तक दवा जारी रखी जाती है, ताकि रोग पुनः न हो जाय। उसी प्रकार डायरी लिखने का काम जारी रहे।

फिर, तो आत्मज्ञान के विषय आप से आप समझ में आने लगेंगे। आहिस्ते-आहिस्ते जीवन में भी उतरने लगेंगे।

आप पठन-पाठन के साथ-सस्थ सारी बातों पर गौर करते जाँय। उपदेशों को आचरण में भी लाते जाँय। सिर्फ पढ़ते ही न चले जाँय।

मेरे लिखने का मतलब हरगिज नहीं है कि आप में दोषों की बहुलता है। आप तो आदर्श की मूर्ति हैं। मेरे लिए तो प्रेरणा के स्रोत ही। मेरी जीवन-धारा को अध्यात्म-क्षेत्र की ओर मोड़ने का श्रेय पूरा-का-पूरा एक आप को है। आप की गीता पढ़ने की इच्छा न हुई होती, न मैं लिखने को बाध्य व कटिबद्ध हुआ होता। गीतामृत प्रकाशित न हुआ होता, न ज्ञानोदय-पुस्तक-माला का सृजन हुआ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता और फिर कठोपनिषद् की चर्चा की बारी भी न आई होती।

मेरे हृदय के उद्गार को व्यक्त करने में मेरी लेखनी असमर्थ हो रही है। थोड़े में मैं आप जैसे मित्र को पाकर अपने को बहुत सौभाग्यशाली समझता हूँ। मेरे लिए दुनिया में और कुछ पाना बाकी न रह गया।

भगवान् आप को सदा स्वस्थ और प्रसन्न रखें।

सप्रेम प्रणाम !

आपका स्नेही मीत
'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय २ : वल्ली ३

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

१८-१-६६

प्रणाम ! साढ़े तीन बजे भोर

गत पत्र में अध्याय २ की दूसरी वल्ली की चर्चा की गई थी। आज वल्ली ३ की वार्ता शुरू की जाती है।

संसार की उपमा पीपल के वृक्ष से देकर यमराज नचिकेता को समझाते हैं ?

यमराज बोले—

हे नचिकेता ! यह संसार पीपल के वृक्ष के समान है। इसकी जड़ ऊपर की ओर है और शाखाएँ नीचे की ओर। यह वृक्ष-रूपी संसार अनादि-काल से चलता आ रहा है। यह स्वयम् भगवान् में से ही निकला हुआ है; यानी उनसे ही उत्पन्न है। भगवान् ही पवित्र ज्योति-पुंज हैं। वे ही अमृत हैं। वे ही पूर्ण ब्रह्म हैं। उन्हीं में संपूर्ण लोक समाए हुए हैं। सभी उन्हीं के अधीन हैं। उनकी उपेक्षा कोई नहीं कर सकता।

बोलता जीव-आत्मा ब्रह्म-स्वरूप ही है। इसे भगवान् का प्रतिनिधि या स्वयम् भगवान् ही समझ। तू जिस तत्व के विषय में जानना चाहता है—वह यही ब्रह्म-रूप अपना है।

प्रिय मित्र ! परमेश्वर-लोक ऊपर है। उसके नीचे ब्रह्म-लोक है और उसके नीचे संसार यानी भूलोक है। संसार-रूप पीपल का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वृक्ष ऊपर परमेश्वर-लोक से शुरू होकर, ब्रह्मलोक होते नीचे भलोक में आता है। इससे इसकी जड़ें ऊपर हैं और शाखाएँ व पत्ते नीचे की ओर हैं।

इस संसार का मूल कारण स्वयम् भगवान् हैं, जो अविनाशी हैं। इसकी परम्परा अनादि-काल से चली आ रही है, इससे यह वृक्ष-रूपी संसार अविनाशी भी कहलाता है। वास्तव में, यह संसार क्षणभंगुर है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! सारे विश्व की उत्पत्ति उसी ब्रह्म से हुई है। उसी की शक्ति-स्रोत से संसार के समस्त व्यापार चल रहे हैं। वह वज्र उठाये हुए की तरह भयावह है ; यानी कठोर शासक है। उसके भय से प्रकृति के सारे व्यापार नियमित रूप से चलते रहते हैं। अग्नि व सूर्य उन्हीं के भय से तपते हैं। इन्द्र, वायु और मृत्यु उन्हीं के भय से अपने-अपने नियत कर्मों को करते रहते हैं।

ऐसे प्रभु को जो अपनी जिन्दगी में ही जान जाते हैं, वे, तो अमर हो जाते हैं। जन्म-मरण से उन्हें छुटकारा मिल जाता है, किन्तु जो उन्हें नहीं जान पाते, वे तो कल्पोंतक जन्मते व मरते रहते हैं।

प्रिय नचिकेता ! जैसे दर्पण में वस्तुएँ साफ दीखती हैं; वैसे ही जीव के निर्मल अन्तःकरण में आत्मा स्पष्ट दीखती है। पितृलोक में आत्मा वैसे ही अस्पष्ट दीखती है जैसे स्वप्न में चीजें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और गंधर्वलोक में जैसे जल में आकृति दीखती है, परन्तु ब्रह्म-लोक में आत्मा सबसे ज्यादा स्पष्ट और पूर्णरूप से वैसे ही दीखती है जैसे अँधेरे में रोशनी।

प्रिय मित्र ! जिस लोक में हम लोग हैं, वही मृत्यु लोक है। यहाँ जो जन्मते हैं, वे निश्चय ही मरते हैं। इसीलिए, इसका नाम मृत्यु-लोक पड़ा होगा। पितृलोक, गंधर्वलोक, ब्रह्मलोक इत्यादि और-और लोक हैं और सबकी अपनी-अपनी अलग-अलग विशेषताएँ हैं।

मृत्युलोक से लोग अपनी-अपनी पुण्य-कमाई को भोगने के लिए पितृलोक में जाते हैं। वहाँ कुछ काल-तक मौज़ की जिंदगी बिताते हैं। गंधर्वलोक, पितृलोक से कुछ ऊँचे दर्जे का माना जाता है। वहाँ अप्सराएँ हैं। नाच-गान छूटकर होते हैं। पुरुषों के मनोरंजन के लिए रमणियाँ हैं तो औरतों के लिए देवगण या यों कहिए कि मृत्युलोक से गये पुरुष देवगण बनते हैं तो स्त्रियाँ अप्सराएँ।

लेकिन **मित्र** ! पितृलोक तथा गंधर्वलोक के वासियों को पुण्य की गठरी खतम होने पर, मृत्यु लोक में जन्मना पड़ता है। इन लोकों में चिरसुख या चिरशांति नहीं मिलती। इन लोकों से परे, ब्रह्म-लोक है। यही ब्रह्म-भवन है। यही परम-धाम कहलाता है। यहाँ के वासी अमर होते हैं। उन्हें जन्म लेना नहीं पड़ता। उन्हें चिरसुख व चिरशांति मिलती है। इस लोक की प्राप्ति ही जीवन की सबसे बड़ी कामयाबी समझी जाती है।

शरीर रहते ही आत्मा का बोध हो जाने पर ही ब्रह्मलोक की प्राप्ति होतो है। इसलिए, हमलोगों का जब तक शरीर कायम है, आत्मदर्शन के लिए जी-जान से कोशिश करनी चाहिए।

सिर्फ ब्रह्मलोक में ही आत्मा के दर्शन स्पष्ट व पूर्णरूप से निरंतर होते रहते हैं। इस प्रकार के दर्शन पितृ-लोक और गंधर्व-लोक में नहीं होते, क्योंकि यहाँ तो जीव भोगों के भोगने में व्यस्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहते हैं। उन्हें आत्मा के बारे में सोचने की फुरसत कहाँ !

मित्र ! मरने के बाद क्या होगा ? बाद की बातें हैं। अभी जो आगे है—वह तो करें। वह है—अपने अन्तःकरण को निर्मल करना। इसमें प्रयत्नशील रहें। कहीं इस अन्तःकरण में मैल जमते गये तो ब्रह्मलोक को कौन कहे ! पितृलोक व गंधर्वलोक भी नसीब न होंगे।

और **मित्र !** सकाम-भक्ति से पितृलोक व गंधर्वलोकों की और निष्काम-भक्ति से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। आप खद बरा (चुन) लीजिए। मौज की कामना हो तो सकाम भक्ति कीजिए और जाइए गंधर्वलोक में। भगवत्-प्राप्ति की लालसा हो तो निष्काम-भक्ति कर, जाइए ब्रह्मलोक में और ब्रह्म से मिल कर एक हो जाइए। नचिकेता की तरह सब भोगों को ठुकराइए।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जीवमात्र की इंद्रियाँ भिन्न-भिन्न तत्वों से बनी हैं। इनके काम भी अलग-अलग हैं। जैसे कान का सुनना, आँख का देखना, त्वचा का स्पर्श करना, इत्यादि, इत्यादि। जीव जबतक जागता रहता हैं ये इंद्रियाँ सक्रिय रहती हैं। जीव के सो जाने पर ये लोप हो जाती हैं। सोया हुआ प्राणी देख नहीं सकता। बोल नहीं सकता। स्पर्श नहीं कर सकता ; इत्यादि-इत्यादि। बोलता जीव के निकल जाने पर तो ये सभी इंद्रियाँ बेकार हो ही जाती हैं। इन बातों का ज्ञान हो जाने पर, बुद्धिमान जन किसी प्रकार का शोक नहीं करते, क्योंकि उन्हें मालूम हो जाता है कि वे आत्मा हैं न कि शरीर और इंद्रियाँ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय नचिकेता ! इंद्रियाँ मन के आधीन हैं। मन बुद्धि के; बुद्धि आत्मा के और आत्मा प्रकृति के आधीन है ! प्रकृति भी परमात्मा के आधीन है। वह परमात्मा निराकार और सर्व-श्रेष्ठ है। उसे जानकर प्राणी अमर हो जाता है।

प्रिय मित्र ! इस शरीर का मालिक जीवात्मा है। बुद्धि, मन और इंद्रियाँ उसके नौकर हैं। इंद्रियों से मन का दर्जा ऊँचा है और मन से बुद्धि का। जीवात्मा चाहे तो बुद्धि को आदेश देकर, बुद्धि, मन और इंद्रियों तीनों पर नियंत्रण रख सकती है। इन्हें गुमराह होने से बचाकर अच्छी राह पर चला सकती है।

मित्र ! प्रकृति, जिसे माया भी कहते हैं, जीवात्मा से भी बढ़कर है। यह तो जीव को बन्दर की तरह नचाती है। एक परमात्मा ही इस माया से श्रेष्ठ हैं। उन्हीं की कृपा से इस माया पर जीव द्वारा काबू पाया जा सकता है। अतएव भगवान् की शरण में जाना निहायत जरूरी है।

प्रिय नचिकेता ! परमात्मा का रूप आँखों से नहीं दीखता। अन्य इंद्रियों से भी उसका देखा जाना संभव नहीं है। उसके रूप का भान तो निर्मल हृदय व शुद्ध-बुद्धि से चिन्तन और मनन करने ही से होता है। उसके रूप का भान हो जाने पर तो जीव जन्म-मरण से बरी हो, अमर हो जाता है।

प्रिय नचिकेता ! जब साधक के मन और पाँचों ज्ञान-न्द्रियाँ—आँख, कान, नाक, जीभ व त्वचा—विषय-भोगों से हटकर शांत तथा स्थिर हो जाती हैं, और जब बुद्धि भी अपने व्यापारों में स्थिर हो जाती है तब वह साधक परमगति की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अवस्था में होता है।

अर्थात् परमगति की अवस्था में जीव की समस्त चित्त-वृत्तियाँ शांत हो जाती हैं। मन में विषय-भोगों की तृष्णा नहीं जागती। फलस्वरूप पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ इनसे बरी हो जाती हैं। जब मन व इंद्रियाँ शांत हो जाती हैं, तो बुद्धि के व्यापार भी स्वतः समाप्त हो जाते हैं। फिर, तो शांति ही शांति रहती है। यही पूर्ण शांतिमय अवस्था ही परमगति है।

यह परमगति अवस्था ही योग कहलाता है। इस अवस्था में साधकगण समस्त इंद्रियों व मनादि पर काबू रखने में बराबर सतर्क रहते हैं; क्योंकि योग में ही बुरी वृत्तियों का नाश तथा सद्वृत्तियों का उदय होता है।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा, मन, वचन और आँखादि इंद्रियों से जानी नहीं जा सकती। यह उनके पहुँच से परे है। इसी लिए, जिनको आत्मा के अस्तित्व में ही विश्वास नहीं हैं, उन्हें आत्मा का बोध हो तो कैसे !

उन्हें सबसे पहले गुरु और शास्त्र के वचनों में विश्वास कर, आत्मा के अस्तित्व में विश्वास करना होगा। दिल में बैठाना होगा कि आत्मा है और हृदय में ही विराजमान है। अपने अन्दर में ही है दूर भी नहीं। फिर उसे तत्व-भाव से जानने का प्रयास करना होगा। उपर्युक्त प्रकार से साधना करनी होगी। साधना में प्रयत्नशील रहने से आत्मा अपना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बोध आप करा देती है।

प्रिय नचिकेता ! आत्मा का बोध हो जाने पर, जीव की समस्त कामनाएँ नष्ट हो जाती हैं। अन्तःकरण में कोई चाह नहीं रह जाती है। उसे ब्रह्म का ज्ञान इसी लोक में भली-भाँति हो जाता है और वह अमर हो जाता है। दुबारा उसे मृत्यु लोक में जन्म लेना नहीं पड़ता।

जब जीव के हृदय की ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं यानी सारे विकार—राग-द्वेष, मद-लोभादि दूर हो जाते हैं और जब हृदय, बिलकुल निर्मल हो जाता है, तब इस जन्म में ही अमर हो जाता है। उसे मर कर, पुनः जन्मना नहीं पड़ता। यही वेदान्त का सनातन उपदेश है।

प्रिय मित्र ! अज्ञान से उत्पन्न मायावश जिसे हम लोग अपना समझते हैं—जैसे स्त्री, पुत्र, मित्र, धनादि—उसके लिए अटूट राग, और जिसे पराया समझते हैं, उसके लिए ईर्ष्या-द्वेषादि का हो जाना ही हृदय की ग्रंथियाँ (गाँठ) हैं। ये ही भगवत्-प्राप्ति के मार्ग में बाधक होती हैं। स्त्री, पुत्र, मित्र, शरीर, धनादि से राग का हट जाना तथा ईर्ष्या-द्वेषादि विकारों का दूर हो जाना ही हृदय-की ग्रन्थियों का खुलना है। इनके खुलते ही जीव के सारे उलझन दूर हो जाते हैं। अन्तःकरण मल-रहित हो स्वच्छ हो जाता है। फिर, तो जीव जीवन-काल में ही जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो, अमर हो जाता है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! जीवधारी के हृदय में एक-सौ-एक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नाड़ियाँ हैं। उनमें एक सुषुम्ना नाम की नाड़ी है जो ऊपर की ओर गई है और मस्तक को भेद कर बाहर निकल गई है। देहान्त के समय जब प्राण इस सुषुम्ना नाड़ी से शरीर के बाहर निकलता है, तो जीव ब्रह्मलोक में जाकर, ब्रह्म में मिल, ब्रह्म-रूप हो जाता है।

अन्य एक सौ नाड़ियाँ शरीर के अन्य भागों में इधर-उधर गई हैं। इनके मार्ग से बाहर जाने पर जीव आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है।

प्रिय मित्र ! प्राणी के हृदय में एक-सौ मूल-भूत नाड़ियाँ हैं। इनमें से प्रत्येक नाड़ी की एक-एक सौ शाखा-नाड़ियाँ हैं और प्रत्येक शाखा-नाड़ी की बहत्तर-बहत्तर हजार प्रतिशाखा-नाड़ियाँ हैं। इस प्रकार से इस शरीर में कुल बहत्तर करोड़ नाड़ियाँ हैं। इन सब में व्याप्त वायु विचरण करता है।

यमराज आगे बोले—

प्रिय नचिकेता ! हृदय के अनुपात से अँगूठे के बराबर शरीरवाली अन्तरात्मा जीव के हृदय में ही विराजमान है। जैसे मूँज में सींक लिपटा हुआ रहता है और सींक को पृथक् करने के लिए मूँज को अलग करना पड़ता है, वैसे ही शरीर में निवास करने वाली अन्तरात्मा में शरीर लिपटा हुआ है। मूँज की नाईं इसे अलग कर, अन्तरात्मा को शरीर से बिलग कर दें ; यानी आत्मा को शरीर से भिन्न समझें। इसे विशुद्ध व अमर समझें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ब्रह्मविद्या तथा योगविधि को यम से सुन कर नचिकेता समस्त विकारों से रहित, विशुद्ध तथा जीवनमुक्त हो गया। उसे ब्रह्म की प्राप्ति हो गई। जो कोई इस अध्यात्मज्ञान को जान लेगा वह नचिकेता की तरह जीवनमुक्त हो जाएगा।

ॐ शांतिः ! शांतिः !! शांति !!!

भगवान् गुरु-शिष्य दोनों की रक्षा एवम् पालन साथ-साथ करें। हम साथ-साथ विद्यार्जन करें। हम दोनों की पढ़ी विद्या तेजस्वी हो। हम द्वेष न करें। तीनों तापों की शांति हो। हम दोनों निरंतर स्नेह-सूत्र में बँधे रहें।

प्रिय मित्र ! सारे कठोपनिषद् की चर्चा समाप्त हुई। इसके उपदेशों को जीवन में उतारना बाकी है जिसके लिए हम लोग आजीवन प्रयत्न करते रहें।

सारे कठोपनिषद् के पढ़ने से पता चलता है कि हम लोग आत्मा हैं, शरीर नहीं। भ्रमवश हम लोग अपने को शरीर समझ कर उसी से ममता करते हैं। आत्मा तो ईश्वर का ही अंश है। वह अविनाशी तथा अजर-अमर है। शरीर के नाश होने पर भी आत्मा का नाश नहीं होता।

यही आत्मा ही बोलता जीव है। जबतक यह शरीर में मौजूद है तब-तक ही इन्सान जिंदा है। इसके निकलते ही इंद्रियाँ तथा शरीर सभी के सभी बेकार हो जाते हैं।

एक ही आत्मा सब में विराजमान है। इसलिए, सभी जीवधारी एक हैं। सब में एक ही आत्मा के अस्तित्व का भान हो जाना ही सच्चा ज्ञान हैं। यह ज्ञान विशुद्ध अन्तःकरण से ही प्राप्त होता है। प्राप्ति के बाद, तो सब कुछ भगवानमय ही दीखने लगता है। सब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपने-सा प्रतीत होने लगते हैं। आपस के भेद-भाव, ईर्ष्या-द्वेषादि सभी मिट जाते हैं।

मित्र ! मन को भगवान् में पिरोकर, चित्त को निर्मल करते चलें। शरीर के भीतर ही विराजमान आत्मा का आभास प्राप्त करें। और सभी जीवधारियों में एक ही आत्मा को एक रूप में ही देखने का निरंतर अभ्यास करें।

आपकी प्रेरणा से धर्म-ग्रंथों के पठन-पाठन में लगकर, मैं बहुत लाभान्वित हुआ हूँ। इसके लिए चाहे जितनी बार भी मैं धन्यवाद दूँ कम ही है। फिर इसकी आवश्यकता भी प्रतीत नहीं होती, क्योंकि मित्र के नाते यह आपका फर्ज ही था।

भगवत्-इच्छा हुई, तो हम लोग कुछ दिनों के बाद योग-वाशिष्ठ की चर्चा में पुनः मिलेंगे। फिर वर्षों साथ रहेगा।

योग-वाशिष्ठ में वशिष्ठ मुनि ने अयोध्या के राजा रामचन्द्र जी को ज्ञानोपदेश दिया है। इसमें बत्तीस सहस्र श्लोक हैं। यह एक अनुपम ग्रंथ है। मैंने कुछ पढ़ा है और मुझे बहुत पसंद आया है। इसे संक्षेप में—करीब दो सौ पृष्टों में—प्रस्तुत करने का विचार है।

अभी मैं आप से विदा लेता हूँ। भगवान् की इच्छा ! फिर, हम दोनों को जब मिलावें।

आप सदा स्वस्थ व प्रसन्न रहें।

अनन्त शुभ कामनाओं के साथ सप्रेम प्रणाम !

आपका स्नेही मीत,
'गणेश'

H-9124:4X2,1
CHO
1996.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१)

वाल्मीकिविद्यापीठपुस्तकालयः

प्रत्यावर्तनतिथिः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

८-नं.४४८८

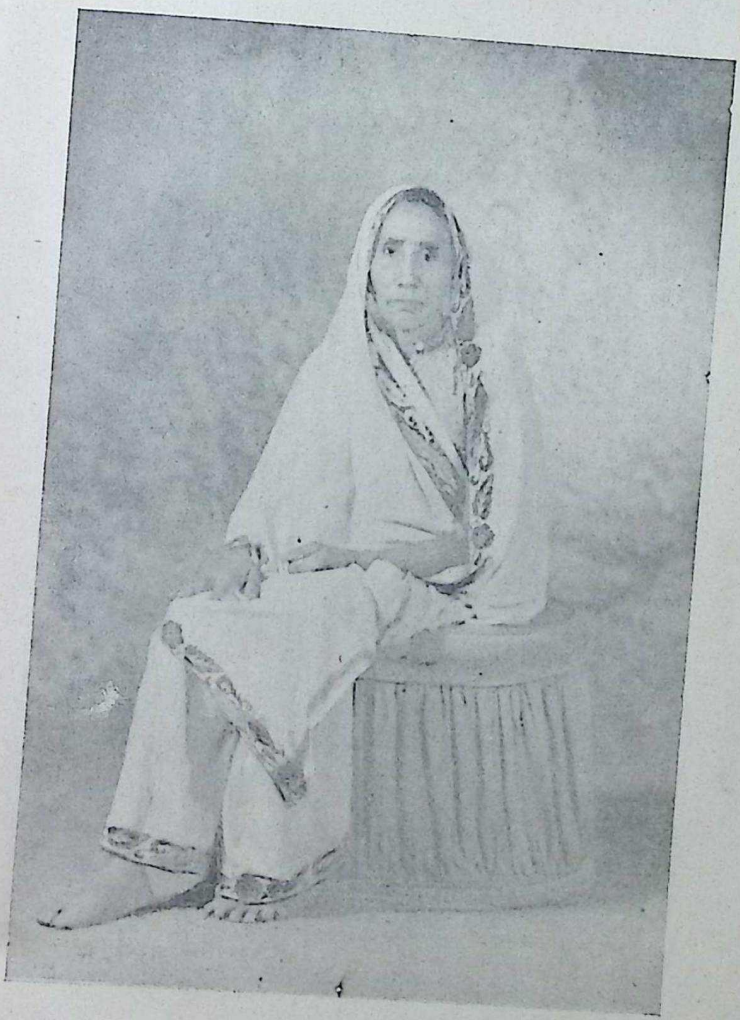

परमपूजनीया स्नेहमयी, माँ के
श्रीचरणों में समर्पित

—'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुभाशँसा

संसारसारं निगमप्रचारं धर्मावतारं हृतभूमिभारम् ।
सदाऽविकारं सुखसिन्धुसारं श्रीरामचन्द्रं सततं नमामि ।।

भारतीय आर्ष-ग्रन्थों में प्रस्थान-त्रयी का सर्वोपरि स्थान है। इनमें उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्र की गणना की गई है। प्रस्थान-त्रयी में उपनिषद् ही मूल प्रस्थान है। द्वितीय प्रस्थान है, श्रीमद्भगवद्गीता।

श्री गणेशजी चौबे ने श्रीमद्भगवदगीता का अनुवाद गीतामृत के रूप में किया है, जो आज से प्रायः एक वर्ष पूर्व जिज्ञासु एवँ सहृदय पाठकों के पुनीत करकमलों में समर्पित हो गया है।

श्री गीता-ध्यान के अन्तर्गत, पूज्यपाद महात्माओं ने इस श्लोक का विधान किया है;

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थोवत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ।।

उपनिषदों को गो-स्वरूप मानकर भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा गीतामृत-रूपी दूध निकालने की कल्पना की गई है। इससे यह स्पष्ट लक्षित है कि श्रीमद्भगवद्-गीता के पावन सन्देश को सम्यक् रूप से हृदयङ्गम करने के लिए उपनिषदों का ज्ञान अपेक्षित है, अनिवार्य है। इस धारणा से और श्री चौबे जी के प्रातिभ-स्फुरण को इस कार्य में समर्थ जानकर, मैंने उनसे अनुरोध किया कि उपनिषदों में अग्रगण्य कठोपनिषद् के अनुवाद को हाथ में लें। मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ कि मेरी प्रार्थना स्वीकार कर उन्होंने दर्शनशास्त्र के गूढ़विषयात्मक इस आध्यात्मिक ग्रन्थ का सरल हिन्दी रूपान्तर कर इसे सर्वसुलभ बनाया और अपनी सिद्धहस्त लेखनी का प्रयोग कर कठोपनिषद्-प्रकाश जैसे उत्तम ग्रन्थ की रचना की।

विधि-विपाक से अथवा संसार के दुर्भाग्य से कहिए, दम और संयम के प्रति जो उपेक्षा आधुनिक समाज में फैल रही है, वह हमें कहाँ ले जाएगी, कहा नहीं जा सकता। इसकी हवा किधर से आ रही है, यह भी विज्ञजनों से अविदित नहीं है। विदेशी समाज के कर्णधारों की यह मान्यता है कि हमारी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मौलिक आवश्यकताएँ दो ही हैं, रोटी और काम-वासना। किन्तु भारतीय प्रकृति-मार्ग क्या है? यह शिवमत, नित्य वन्दनीय गोस्वामी तुलसीदास जी ने निम्न शब्दों में स्पष्ट-रूप से घोषित कर दिया है :—

जौ मन भज्यो चहै हरि सुरतरु।
तौ तजि विषय विकार सार भजु, अजहुँ जौ मैं कहौं सोई करु॥
सम, सन्तोष, विचार विमल अति, सतसंगति, ए चारि दृढ़ करि धरु।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद रागद्वेष निसेष करि परिहरु॥
स्रवन कथा, मुखनाम, हृदयहरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुहरु।
नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि अगजगरूप भूप सीतावरु॥
इहै भगति वैराग्य ज्ञान यह हरि तोषन यह सुभव्रत आचरु।
तुलसिदास सिवमत मारग यहि चलत सदा सपनेहुँ नाहि न डरु॥

कार्लमार्क्स और फ्रायड के भक्तों को अर्थ एवँ भोग-लिप्सा, संसार के संघर्ष के मूल में भले ही दीख पड़ता हो किन्तु हमारे विचार से मृत्यु-भय से मुक्त हो कर हम अनेक संघर्षों के मूल पर ही कुठाराघात करेंगे। महाभारत-कार ने यक्ष-युधिष्ठिर सम्वाद में 'किमाश्चर्यः अतःपरम्' रख कर, मृत्यु की अनिवार्यता सिद्ध की है, जिसे हम नित्य प्रति देखकर भी नहीं देखते हैं; और भौतिकवाद पर तीखा व्यँग्य-कटाक्ष छोड़कर, एक चिरन्तन-सत्य का उद्घाटन किया है। श्री चौबेजी ने कठोपनिषद्-प्रकाश के माध्यम से इसी सत्य का दिग्दर्शन कराया है। मेरी ईश्वर से विनीत प्रार्थना है कि, गाँव-गाँव में, नगर-नगर में, देश के हर कोने में ऐसे संघ बनें जहाँ नित्य-प्रति, नियमपूर्वक कठोपनिषद्-प्रकाश और गीतामृत का पठन-पाठन हो। देश और समाज का मंगल इसी में निहित है। जिस लोककल्याण की भावना से श्रीचौबेजी ने इस व्रत को हाथ में लिया है, वह निर्विघ्न पूरा हो, यह मेरी दूसरी प्रार्थना है।

लाजपत भवन, कल्याणी देवी, प्रयाग
देवोत्थान एकादशी २०२३
२३ नवम्बर १९६६

लक्ष्मी नारायण
मंत्री
लोक सेवक मण्डल
(उत्तर प्रदेश शाखा)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषय-सूची

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
१—भूमिका—श्री वच्चन पाठक 'सलिल'		....	६
२—सम्मतियाँ—(विविध)		....	९
३—नम्रनिवेदन	(लेखक)	....	१२
४—कृतज्ञता-ज्ञापन	"	....	१३
५—आत्म-परिचय	"	....	१५
६—विषय-प्रवेश	"	....	१७
७—कठोपनिषद् प्रकाश अध्याय १ वल्ली १		....	२०
८— " " " " " २		....	३५
९— " " " " " ३		....	५६
१०— " " " " " १		....	७०
११— " " " " " २		....	७८
१२— " " " " " ३		....	८७

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुरोवाक्

विद्यावाचस्पति प्रो० वच्चन पाठक सलिल
एम० ए०, साहित्यालंकार

ॐ सहनावतु । सहनौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्वि नावधीतमस्तु । मा विद्विषावहे ।
ॐ शांतिः ! शांतिः !! शांतिः !!!

देश-विदेश के विद्वानों ने स्वीकारा है कि हिन्दू धर्म एक वैज्ञानिक धर्म है। इसकी रचना किसी परिस्थिति विशेष में अथवा किसी धर्म संस्थापक की प्रेरणा से नहीं हुई है, अपितु सहस्त्राब्दियों से चलते आ रहे चिन्तन-मनन तथा अनुशीलन की भित्ति पर हिन्दुत्व का निर्वाण हुआ है; किन्तु यह भी स्पष्ट है कि उपनिषदों के अभाव में हिन्दू धर्म के पास ऐसा दर्शन नहीं रह जाता है जो इस धर्म को सर्वथा वैज्ञानिक बनाए रख सके। इस प्रकार संक्षेप में उपनिषदों का महत्व मालूम हो जाता है।

उपनिषदों में जिन ग्यारह उपनिषदों को प्रमुख माना जाता है, वे हैं—ईशोपनिषद्, केनोपनिषद्, कठोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, माण्डूक्योपनिषद्, ऐतरेयोपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्, श्वेताश्वेतरोपनिषद्, छान्दग्योपनिषद्, तथा वृहदारण्यकोपनिषद्। इनमें कठोपनिषद का महत्व कई दृष्टियों से अप्रतिम है। इसके अभाव में सारे उपनिषद साहित्यिक-कृतियाँ मात्र रह जाते हैं। विद्वानों ने इसे हिन्दूधर्म का मेरुदण्ड माना है। एक उक्ति द्रष्टव्य है :—

आज हम जड़ और भौतिकवादी बनते जा रहे हैं। जीवन के शाश्वत मूल्यों को पुराना कह कर त्यागते जा रहे हैं एवँ नयी रोशनी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की चकाचौंध में पड़कर जीवन में खोखलेपन की सृष्टि करते जा रहे हैं। ऐसे समय में ब्रह्मविद्या की चर्चा सामयिक भले ही न हो, पर उपयुक्त तो है ही। युग बदलता है, पर सत्य नहीं बदलता। वैदिक काल में सूर्य पूर्व दिशा में उगता था और आज भी पूर्व दिशा में ही उगता है। मानव-मात्र की आध्यात्मिक उन्नति के लिए तथा मानवता को विध्वंस से बचाने के लिए आज भी ब्रह्मविद्या की आवश्यकता है। इस दिशा में उपनिषद् हमारी सहायता करते हैं। इन में भी कठोपनिषद् का स्वर सर्वाधिक संयत और सुलझा हुआ है।

संसार की समस्त बुराइयों की जड़ अविद्या है। प्रमाद-वश मनुष्य सोचता है कि वह शरीर है। शरीर मैं का पर्याय नहीं हो सकता। "मैं आत्मा हूँ, जो शुद्ध है प्रबुद्ध है, अनादि है, तथा अचेतन है—यह ज्ञान ही आत्म-विद्या है। यही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है। स मोदते मादेनीय हि लब्ध्वा।" यही ज्ञान यम द्वारा नचिकेता को प्रदान किया गया था और यही कठोपनिषद् का विषय है।

आत्मा का ज्ञान अन्यान्य भौतिक विषयों के ज्ञानों से सर्वथा भिन्न है। आत्मा-साक्षात्कार मात्र ज्ञान से संभव नहीं है। भौतिक विज्ञान की नाईं प्रयोगशाला में इसकी प्रत्यक्ष जाँच संभव नहीं है। आत्म-विज्ञान, आस्था, शुद्धता और साधना से ही संभव है।

पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार कठोपनिषद की रचना ५०० वर्ष ईसा से पूर्व हुई थी। तब से आज तक इसके अनेक भाष्य निकले और संसार की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद भी हुए। अग्रज तुल्य आदरणीय श्री गणेश चौबे जी ने जब बताया कि वे कठोपनिषद् को हिन्दी में प्रस्तुत करने जा रहे हैं, तो मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।

श्री चौबे जी एक कर्मयोगी हैं। वर्षों से आरक्षी विभाग में काम कर रहे हैं एवँ एक असामान्य समाज विशेष ही उनका कार्य क्षेत्र है, पर उनके जितना स्वाध्याय बहुत थोड़े विद्वान् कर पाते हैं। उनकी प्रथम पुस्तक 'गीतामृत' बहुत अधिक लोकप्रिय हुई है। इसका कारण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह है कि श्री चौबे जी सामान्य व्यक्ति की बोलचाल की सरलतम भाषा में लिखते हैं। आडम्बर और विद्वत्ता-प्रदर्शन का उनमें मोह नहीं है।

कठोपनिषद् की यह प्रस्तुति कई दृष्टियों से नवीनता लिए हुए है। मैंने इसकी पाण्डुलिपि पढ़ते समय स्पष्ट अनुभव किया है कि लेखक सामान्य जन तक इसे पहुँचाना चाहते हैं और औपनिषदिक रहस्यों की गुत्थियों को तोड़-तोड़ कर सर्व सुलभ बनाने की उन में एक खास बेचैनी है। यत्र-तत्र प्रस्तुति में आप को मौलिकता भी मिलेगी और संभव है कहीं-कहीं विद्वान् उससे सहमत भी न हों। इस दिशा में मैं मात्र इतना ही निवेदन करना चाहूँगा कि यह पुस्तक कठोपनिषद् का अविकल अनुवाद नहीं है। 'अन्यूनं नाति रिक्तं च' की उक्ति केवल अनुवादों पर लागू होनी चाहिए। यह तो एक साधक का 'गुनावन' है।

श्री चौबे जी के वे मित्र वस्तुतः भाग्यशाली रहे होंगे, जिन्हें पत्र रूप में यह ज्ञान-भण्डार दिया गया होगा। आज पुस्तकाकार होने के कारण हम भी उस मित्र के समान ही इससे ज्ञानोपलब्धि कर सकते हैं, क्योंकि साधकों का "स्वान्तः सुखाय" वस्तुतः सर्वान्तः सुखाय होता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि श्री चौबे जी की इस कृति का आदर होगा। हममें इस ज्ञानामृत का पान कर अमर जीवन प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा जगे, जो नचिकेता में उत्पन्न हुई थी, क्योंकि श्रुति कहती है :—

"इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टि" (के० उ० २५) अर्थात् इस मानव-जीवन का परम लाभ आत्मामृत की प्राप्ति ही है।

तुलसी-जयन्ती संवत् २०२३ —बच्चन पाठक 'सलिल'
कॉलेज रोड
जमशेदपुर (विहार)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सम्मतियाँ

सुखी जीवन एवँ भगवद्-प्राप्ति के लिए आत्मबोध अनिवार्य है। उसकी प्राप्ति का मुख्य साधन चित्त-शुद्धि है। अन्तःकरण को निर्मल किये बिना आत्म-तत्व का बोध नहीं होता। विशुद्ध काया रूपी खेत में ही ज्ञान-रूपी बीज अंकुरित होता है। फिर आवश्यकता होती है—ज्ञानोपार्जन की, सद्ग्रन्थों के पठन-पाठन, एवँ बचनामृतों के श्रवणादि की।

कठोपनिषद् में आत्म-तत्व का वर्णन नचिकेता और यमराज की वार्त्ता के माध्यम से सुन्दर ढंग से किया गया है। उसके पठन-पाठन, मननादि से आत्म-बोध की दिशा में प्रगति होती है।

मूल ग्रंथ संस्कृत-छन्दों में होने के कारण जन-साधारण के लिए सुलभ नहीं है। उसे बोल-चाल की सरल भाषा में प्रस्तुत करने का श्री चौबे का सद्-प्रयास वास्तव में सराहनीय है। रचना पत्र-शैली में होने से मधुर व हृदयग्राही हो पायी है।

सर्व-साधारण के लिए पुस्तक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसी मेरी धारणा है। कठोपनिषद्-प्रकाश ज्ञान-प्रकाश दे, यही मेरी शुभ कामना है!

आरक्षी अधीक्षक, जमशेदपुर — **कृष्ण प्रकाश**

दि० २४-१०-६६ — आई० पी० एस०

पुराने सभी उपनिषदों में कठोपनिषद् अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। थोड़े शब्दों में आत्म-ज्ञान के तत्व की विवेचना, रोचक ढंग से जैसे इस उपनिषद् में की गयी है वैसे और कहीं नहीं प्राप्त है। यहाँ तत्व-ज्ञान की विवेचना के साथ-साथ उपासना की खिचड़ी भी नहीं पकायी गई है। शुद्ध ज्ञान की बात ही कही गई है।

इस कठोपनिषद्-प्रकाश के लेखक श्री चौबे ने गीतामृत नाम की एक पुस्तिका

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सरल शब्दों में लिख कर प्रकाशित करायी। गीतामृत के बाद कठोपनिषद् का स्थान इसलिए, स्वतः आता है कि इस उपनिषद् से गीता के मूल-भाव और कई श्लोक भी मिलते-जुलते हैं। दोनों के मूल सिद्धान्त भी एक हैं।

लेखक ने कठोपनिषद् को सर्व साधारण के लिए रोचक ढंग से सरल शब्दों में अनुवाद किया है—इसके लिए वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि जिन पाठकों को मूल ग्रंथ पढ़ने में कठिनाई हुई होगी और उपनिषदों के दर्शन का गूढ़-तत्व समझ कर उसके पास जाने से घबड़ाहट हुई होगी, उन्हें इस पुस्तक को पढ़कर यह स्पष्ट हो जायगा कि जिन स्रोतों के मेल से गीता-रूपी ज्ञान सागर लबालब भरा हुआ है, उन्हीं में से एक स्रोत कठोपनिषद् भी है। ईश्वर की कृपा से जैसे नचिकेता को अध्यात्म-विद्या जानने की उत्कण्ठा हुई वैसे ही पाठकों को भी हो—यही हमारी शुभ कामना है।

जमशेदपुर —अमृतधारी सिंह
२४ अक्टूबर, १९६६ (प्रोफेसर)

उपनिषदों का ज्ञान भारतीय संस्कृति की परम देन है। इनमें अवगाहन से कितने-कितने यहाँ के सुपुत्र सदा के लिए परमानन्द में लीन हुए हैं। कठ-वल्लियाँ उस ज्ञान को एक मार्मिक रीति से, ओजस्वी शब्दों के प्रवाह से एक रोचक चित्र-पट खींचती हुई, जिज्ञासुओं के समक्ष करती हैं। जन-साधारण की भाषा में इसकी अनुकृति एक महान् जनसेवा है।

यह ज्ञान-यज्ञ है। ज्ञान-यज्ञ भगवान् को बहुत प्रिय होता है। इससे उनका सान्निध्य मिलता है। उनके विराट् स्वरूप की आराधाना होती है।

समय का सदुपयोग ही आर्य—धर्म की पद्धति है। सांसारिक परिवेश में रह कर इस अभिरुचि का विकास ईश्वर की कृपा का सूचक है।

मुझे हर्ष है कि श्री गणेश जी ने सरल ओजस्विनी भाषा में, जो कुछ भी समझा है, आप के समक्ष रख दिया है।

ॐ शान्तिः !

दि० १८-१०-६६ वेदानन्द झा
आयकर आफिसर, जमशेदपुर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्थूल तथा भौतिक जगत् की ओर से, सूक्ष्म तथा नैतिक (आत्मिक) जगत् की ओर बढ़ने की प्रवृतियों का नाम ही उपनिषद् है और यही प्रवृत्ति इस बात की द्योतक है कि कर्म करते हुए भी मनुष्य द्वन्दों तथा माया मोह से अपने को अलिप्त तथा अछूता समझने लगता है।

उस समय उसे राजा विदेह के ये शब्द मानस में स्पष्ट भाषित होने लगते हैं :—

'मिथिलायां समृद्धायां न मे कृष्यति किंचन।
मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति किंचन॥

'हे लोगों मिथिला के उत्कर्ष से भी आल्हाद नहीं होता तथा न इसके जल-कर भस्म होने पर ही कष्ट होता है।'

यही भावना उपनिषदों की आत्मिक-प्रवृत्ति का सार है।

कठोपनिषद्, उपनिषद्‌ों में प्रमुख है। इसे सरल भाषा में प्रस्तुत कर सामान्य लोगों के लिए सुलभ बनाने का प्रयास श्री चौबे जी ने किया है। मैं इसकी सफलता की कामना करता हूँ!

अरुना क्लिनिक, साकची — डा० कृष्ण रञ्जन शर्मा
जमशेदपुर दि० २४-१०-६६

श्री गणेश चौबे जी ने इस छोटी-सी पुस्तक में कठोपनिषद् के तत्वों को मधुर और सरल भाषा में इस प्रकार व्यक्त किया है कि यह सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य बन गया है। अपने कार्यों में व्यस्त रहने पर भी वे 'ज्ञानामृत' और 'कठोपनिषद्' के लिखने में पूर्णरूपेण सफल हुए हैं। आशा है श्री चौबे जी का कठोपनिषद् गणेश जी के वरदान-स्वरूप मानव-कल्याण में उपयोगी सिद्ध होगा; साथ ही लोगों को आध्यात्मिकता, मानवता और कर्तव्यपरायणता की ओर उन्मुखकर एक आदर्श समाज का सृजन करेगा।

सी/२२ बी. ब्लाक — श्यामसुन्दर प्रसाद
सोनारी, जमशेदपुर—५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नम्र निवेदन

जमशेदपुर
दिनांक २२-१०-६६

प्रिय पाठक एवँ पाठिकाएँ,

सादर प्रणाम !

आप लोगों में बहुतों ने मेरी प्रथम रचना-गीतामृत-पढ़ा होगा। इसकी रचना-काल में मेरे पूज्य गुरु श्री लक्ष्मीनारायण सिंह जी एम० ए०, साहित्यरत्न, मंत्री लोकसेवकमंडल, ने इसे पुस्तक-माला के प्रथम पुष्प के रूप में निकालने की इच्छा प्रकट की तथा 'ज्ञानोदय-पुस्तक-माला' नामकरण भी आपने ही किया। फिर मेरी अनुमति चाही जो औपचारिकता जैसी थी। भला ! उनकी बात मैं कब टालने वाला था। इस प्रकार से ज्ञानोदय-पुस्तक-माला का सृजन हुआ।

फिर, आप ने मुझे उपनिषद् पढ़ने की राय दी एवँ साथ-साथ पुस्तकें भी दीं। निर्देशानुसार, कठ-उपनिषद् का पठन-पाठन कर, मैंने यह तुच्छ चिन्तन कठोपनिषद्-प्रकाश ज्ञानोदय-पुस्तक-माला के पुष्प दो के रूप में भगवान् के पूजा स्वरूप ही तैयार किया। जो कुछ बन पड़ा है—प्रस्तुत है। उसे आप लोग भक्ति-भाव से अभिषिक्त पूजा की सामग्री-भगवान् पर चढ़ाया हुआ प्रसाद-ही समझें एवँ उसी रूप में ग्रहण करने की कृपा करें।

योग-वासिष्ट-सार लिखने का आदेश मुझे आप से मिल चुका है। आवश्यक पुस्तकें भी आप से प्राप्त हो चुकी हैं, रचना में लगा हूँ।

संस्कृत के प्राचीनतम सद्ग्रन्थों को बोल-चाल की सरल भाषा में प्रस्तुत कर सर्व-साधारण के लिए सुलभ बनाना ही हम लोगों का एक मात्र उद्देश्य है। आप सबों का योग-दान वाञ्छनीय है।

आप सबों का
'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कृतज्ञता-ज्ञापन

जमशेदपुर
दिनांक २२-१०६६

प्रिय मित्र,

सादर प्रणाम !

मुझे आप को सूचित करते, अत्यन्त खुशी हो रही है कि ज्ञानोदय पुस्तक-माला के कार्यों—पुस्तकों की बिक्री, प्रचार व प्रसारादि में निम्नाङ्कित अभिभावकों, मित्रों व स्वजनों से विशेष-रूप से सहायता मिलती रही है—

१. श्री हरेश्वर प्रसाद राजपाल, निवासी टोला दहियावाँ, छपरा, जिला छपरा।
२. श्री किशोरी प्रसाद, व्रास आर्ट पैलेस, चर्च रोड, राँची।
३. पं० ओंकार नाथ सनेही, हिनूँ, राँची।
४. श्री लक्ष्मीपति राव एम० ए० कदमा, जमशेदपुर।
५. श्री पारसनाथ तिवारी, थानेदार, लातेहार थाना, जिला पलामू।
६. श्री ठाकुर महेश्वरप्रसाद सिंह, थानेदार मानगो थाना, जमशेदपुर।
७. श्री जे० एन० लाल, आरक्षी अ० नि० राँची ट्राफिक।
८. श्री निरंजन महाराज, शर्मा-ट्रान्स पोर्ट, अपर बाजार-राँची।
९. श्री केदार मिश्र, ग्राम कोठरा, थाना सासाराम, जिला शाहाबाद, फिलहाल किताडीह, जमशेदपुर।
१०. श्री वी० पी० सिंह, टेलको सिक्यूरिटी, जमशेदपुर।
११. श्री परशुराम तिवारी, मंत्री दिनसा पुस्तकालय जुगसलाई; जमशेदपुर।
१२. श्री रामकेश्वर लाल विल्डिग, साकची, जमशेदपुर।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

१३. श्री श्यामसुन्दर प्रसाद एम० ए०, साकची, जमशेदपुर।
१४. श्री वृन्दावन साहू, पुस्तक भण्डार साकची, जमशेदपुर।
१५. श्री देवेन्द्र प्रसाद, राजेन्द्र स्टोर्स, साकची, जमशेदपुर।
१६. स्वजन-प्रिय श्री शिवपूजन दुबे, ग्राम तेतरी, थाना सासाराम, जिला-शाहाबाद।
१७. स्वजन प्रिय जनार्दन चौबे, सोनारी, जमशेदपुर।
१८. स्वजन प्रिय श्री जगन्नाथ तिवारी, टेल्को वर्क्स, जमशेदपुर।

डाक्टर कृष्णरञ्जन शर्मा एम० वी० वी० एस, साकची, जमशेदपुर ने पाण्डुलिपि पढ़ कर महत्वपूर्ण सुझाव देने की कृपा की है।

मित्र ! उपर्युक्त महानुभावों के हमलोग अत्यन्त आभारी हैं। इनके दीर्घ-जीवन सुख व शांति की कामना करते रहें। आशा है—आप सबों का सहयोग निरंतर प्राप्त होता रहेगा।

और मित्र ! ज्ञानोदय पुस्तक माला के जन्मदाता एवं कर्णधार-आदरणीय श्री लक्ष्मी नारायण सिंह जी व बच्चन पाठक 'सलिल' जी के प्रति आभार प्रकट करने की धृष्ठता कैसे करें ! भगवान करें ! आप दोनों सदा स्वस्थ, सुखी एवं दीर्घजीवी रहें—जिसे सृजे हैं, उसे पालते रहें।

आपका आत्म-स्वरूप
'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

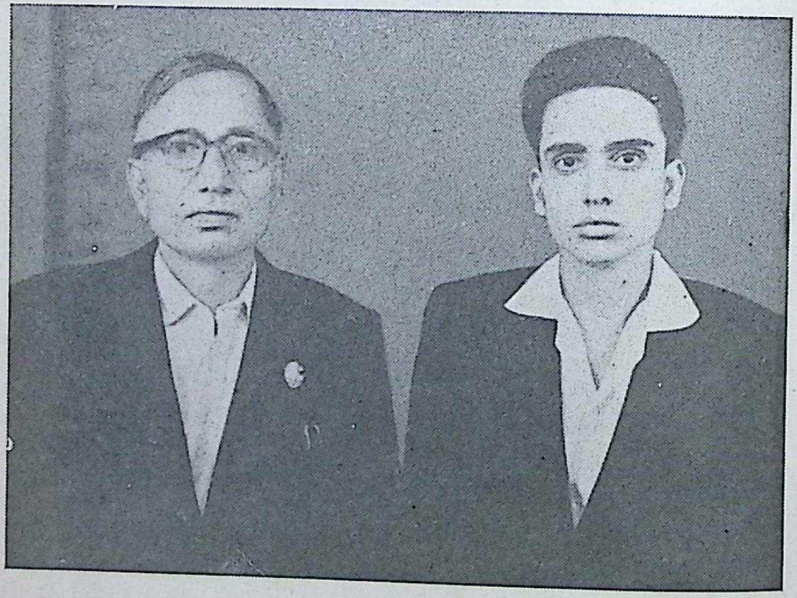

लेखक श्री गणेश चौबे अपने पुत्र चिः रमेश के साथ

प्रिय मित्र,

आज सन् १९६६ की पहली तारीख को, आइए, हम लोग कठोपनिषद् की चर्चा—इसके उपदेशों को अपने जीवन में उतारने तथा उनके अनुरूप अपने जीवन को ढालने के उद्देश्य से—प्रारम्भ करें !

—लेखक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Funding: MIDF

६४८८

AUTHOR चौबे गणेश

TITLE कठोपनिषद्-प्रकाश

६४८८

H-Q124:4X2,1
CHO
1996.

महेन्द्र संस्कृत विश्वविद्यालय
वाल्मीकि विद्यापीठ
पुस्तकालय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Funding: MIDF

प्रतीक्षा करें

योग-वासिष्ठ का सरल अध्ययन

लेखक—श्री गणेश जोशी

HQ12
.CH
19

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu